भारत की बहुभाषिकता एवं भाषिक एकता

प्रोफेसर महावीर सरन जैन

भारत में न केवल शताधिक भाषाएँ बोली जाती हैं अपितु अनेक भाषा परिवारों की भाषाएँ बोली जाती हैं। इसी कारण, भारत की बहुभाषिकता की विवेचना के पूर्व संसार के भाषा परिवारों का संक्षिप्त परिचय आवश्यक है।

संसार के भाषा परिवार

अनुमान किया जाता है कि संसार में लगभग सात हजार भाषाएँ बोली जाती हैं। एथनोलॉग के अनुसार संसार में 6912 भाषाएँ बोली जाती हैं। संसार में बोली जाने वाली भाषाओं की निश्चित संख्या के बारे में प्रामाणिक रूप से कहना सम्भव नहीं है। इसका मूल कारण यह है कि किन्हीं दो भाषाओं के बीच निश्चित विभाजक रेखा नहीं खींची जा सकती। दो भाषिक रूप एक ही भाषा के भिन्न रूप हैं अथवा वे भिन्न भाषाएँ हैं – इस पर विद्वानों के बीच विवाद रहता है। Dallas, TX: SIL/ http://www.ethnologue.com / (Gordon, Raymond G., Jr. (Ed.): Ethnologue: Languages of the world (15th ed., 2005) http://en.wikipedia.org/wiki/Language_family)

इनमें ऐसी भाषाएँ भी हैं जिनके बोलने वालों की संख्या केवल सैकड़ों में है। भारत की 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में 96 ऐसी भाषाएँ बोली जाती हैं जिनके बोलने वालों की संख्या भारतीय स्तर पर 10 हजार से भी कम है। एथनोलॉग के अनुसार संसार में 204 भाषाओं के बोलने वालों की संख्या 10 से भी कम है तथा 548 भाषाओं के बोलने वालों की संख्या 100 से कम है। जो भाषाएँ दस लाख से अधिक लोगों द्वारा बोली जाती हैं उनकी संख्या 347 है। इन 347 भाषाओं में 75 भाषाओं के बोलने वालों की संख्या एक करोड़ से अधिक है। संसार में दस भाषाएँ ही ऐसी हैं जिनके बोलने वालों की संख्या की संख्या दस करोड़ से अधिक है – 1. चीनी 2. हिन्दी 3. अंग्रेजी 4. स्पेनिश 5. बंगला 6. पुर्तगाली 7. रूसी 8. अरबी 9. जापानी 10. जर्मनी। बहुत से विद्वानों का मत है कि किसी भाषा के अनुरक्षण के लिए उसके बोलने वालों की संख्या एक लाख से अधिक होनी चाहिए। भाषा वैज्ञानिकों का अनुमान है कि इक्कीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक भाषाओं की संख्या में अप्रत्याशित रूप से कमी आएगी।(Harrison, K. David. (2007) When Languages Die: The Extinction of the World's Languages and the Erosion of Human Knowledge. New York and London: Oxford University Press.) अनुमान है कि वे भाषाएँ ही टिक पायेंगी जिनका व्यवहार अपेक्षाकृत व्यापक क्षेत्र में होगा तथा जो भाषिक प्रौद्योगिकी की दृष्टि से इतनी विकसित हो जायेंगी जिससे इन्टरनेट पर काम करने वाले प्रयोक्ताओं के लिए उन भाषाओं में उनके प्रयोजन की सामग्री सुलभ होगी।

संसार की भाषाओं को विद्वानों ने उनके ऐतिहासिक सम्बन्धों के आधार पर भाषा परिवारों / भाषा कुलों में बाँटा है। भाषा परिवार ऐसी समस्त भाषाओं के समूह को कहते हैं जो किसी एक आदि भाषा से निकला हो। दूसरे शब्दों में आदि भाषा से प्रसूत भाषाओं के समूह को भाषा–परिवार कहते हैं। इस प्रकार की विचारधारा का पल्लवन 17वीं शताब्दी में यूरोप के कतिपय विद्वानों के इस उद्घोष से हुआ कि संस्कृत, लैटिन एवं ग्रीक में पर्याप्त भाषिक समानताएँ विद्यमान हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से एक भाषा परिवार की भाषाओं में समानताएँ होती हैं।(1. Voegelin, Carl F. & Voegelin, Florence M. (1977) Classification and index of the world's languages. Amsterdam. 2. C. George Boeree.The Language Families of the World. Shippensburg University 3. Merritt Ruhlen. A Guide to the World's Languages. Stanford University Press,Stanford 1991)

काल एवं देश के कारण आदि भाषा से प्रसूत भाषाएँ ऐसी दशाओं में विकसित हो सकती हैं जिससे उनमें भाषिक–संरचना की समानता एवं एकरूपता की स्थिति न रह जाए। इसी प्रकार, काल एवं देश के कारण भिन्न भाषा–परिवारों की भाषाओं में भाषिक–संरचना की समानता एवं एकरूपता का विकास भी हो सकता है।उदाहरणार्थ, संरचनात्मक दृष्टि से भारत की आधुनिक आर्य भाषाएँ भारोपीय परिवार की यूरोपीय शाखाओं की भाषाओं की अपेक्षा भारत के द्रविड़ परिवार की आधुनिक भारतीय भाषाओं के अधिक निकट हैं।

भौगोलिक आधार पर भाषा परिवारों को चार खण्डों में विभाजित किया जा सकता है :–

1. प्रशांत महासागर एवं आस्ट्रेलिया महाद्वीप
2. अमेरिकी महाद्वीप
3. अफ्रीकी महाद्वीप
4. यूरोप एवं एशिया के महाद्वीप

यूरोप एवं एशिया महाद्वीपों के भाषा–परिवारों की भाषाओं का अपेक्षाकृत क्रमबद्ध एवं वैज्ञानिक अध्ययन निष्पन्न हुआ है किन्तु अन्य तीन खण्डों के भाषा परिवारों की भाषाओं का अभी तक समुचित एवं वैज्ञानिक अध्ययन सम्पन्न नहीं हुआ है। इसी कारण इन क्षेत्रों के भाषा परिवारों की संख्या एवं नामों के सम्बन्ध में मत भिन्नता अधिक मिलती है।

I. प्रशान्त महासागर एवं आस्ट्रेलिया महाद्वीप के भाषा–परिवार :–

इस खण्ड के भाषा परिवारों की भाषाओं का प्रसार हिन्द महासागर एवं प्रशान्त महासागर के द्वीपों एवं आस्ट्रेलिया महाद्वीप में है। इस खण्ड की भाषाओं को प्रायः 5 भाषा परिवारों में वर्गीकृत किया जाता है :

1. इंडोनेशियन परिवार – प्रमुख भाषाएँ : मलय, फारमोसन, जावनीज़, सुन्दानीज़, मदुरन, बालीनीज, फिलिप्पाइन, होवा

2. मलेनेशियन परिवार – प्रमुख भाषाएँ : फीज़ी, सोलोमानी

3. पालिनेशियन परिवार – प्रमुख भाषाएँ : समोआन, मओरी, हवाइयन, ताहिशियन , टोंगी

4. पापुअन परिवार – मुख्य रूप से पापुअन न्यूगिनी द्वीप समूह की भाषाएँ : विद्वानों का अनुमान है कि पापुअन न्यूगिनी द्वीप समूह में लगभग 820 भाषाएँ बोली जाती हैं। (1.Languages of Papua New Guinea: Publications of the Summer Institute of Linguistics 2. Andrew Pawley, Robert Attenborough, Robin Hide and Jack Golson, Eds, Papuan pasts: cultural, linguistic and biological histories of Papuan-speaking peoples.)

5.आस्ट्रेलियन परिवार – आस्ट्रेलियन परिवार के अन्तर्गत 27 भाषा परिवार माने जाते हैं। इन 27 भाषा परिवारों में से एक भाषा परिवार 'पाम न्यूगन' के अन्तर्गत विद्वानों ने 175 भाषाओं के नाम गिनाए हैं। विद्वानों का अनुमान है कि आस्ट्रेलियन परिवार की 90 प्रतिशत आदिवासी भाषाएँ विलुप्त हो जायेंगी।

(1. Dixon, R. M. W. (2002) Australian Languages: Their Nature and Development 2. Cowden, Janet, compiler. (1996) Bibliography of the Summer Institute of Linguistics, Australian Aborigines and Islanders Branch: Up to December 1996. 3. Huttar, George L., Joyce Hudson, and Eirlys Richards(1975) Bibliography of the Summer Institute of Linguistics, Australian Aborigines Branch. 4.Jagst, Else, compiler(1981) Bibliography of the Summer Institute of Linguistics, Australian Aborigines Branch (up to August 1981) 5.Jagst, Else(1985) Bibliography of the Summer Institute of Linguistics, Australian Aborigines Branch (up to December 1985) 6. Australian Aborigines and Islanders Branch,(up to December 1991)7. Poole, Alison, compiler(1988) Bibliography of the Summer Institute of Linguistics, Australian Aborigines and Islanders Branch (up to December 1988).

8. http://en.wikipedia.org/wiki/Australian_Aborginal_languages)

II .अमेरिकी महाद्वीप के भाषा–परिवार :–

अमेरिका महाद्वीप के आदिम निवासियों के भाषा परिवारों की संख्या निश्चित नहीं है। कुछ विद्वानों ने केन्द्रीय अमेरिका एवं मेक्सिको के क्षेत्र में 28 भाषा परिवार, शेष दक्षिणी अमेरिका में लगभग 80 भाषा परिवार तथा उत्तरी अमेरिका में लगभग 28 से 50 भाषा परिवारों के नाम गिनाए हैं।)

(http://en.wikipedia.org/wiki/Indigenous_languages_of_the_Americas)

हम इस क्षेत्र के भाषा परिवारों को तीन उपखंडों में विभाजित कर सकते हैं :–

1 उत्तरी अमेरिका – 1. एस्किमो, 2. अल्गोनक़िअन 3. अथबस्कन, 4. इरोक़ोइअन 4. मुस्कोजिअन 5. सिउआन आदि 35 भाषा परिवार हैं।

2. केंद्रीय अमेरिका एवं मेक्सिको– 1. पिमान 2. नहुअत्लन 3. शोशोनियन 4. अज़्टेक 4. मयान आदि भाषा परिवार प्रसिद्ध हैं।

3. शेष दक्षिण अमेरिका– 1. अरबाक एवं कारिब़ 2. तुपी–गौरानी, 3. अरोकैनिअन एवं केचुआन, 4. तेराडेलफ़्यूगो आदि भाषा परिवार प्रसिद्ध हैं।

अमेरिका महाद्वीप के आदिम निवासियों की भाषा एवं संस्कृति की अध्ययन परम्परा का सूत्रपात करने वालों में बोआस तथा सपीर के नाम सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं।(Boas, Franz. (1911). Handbook of American Indian languages (Vol. 1). Bureau of American Ethnology, Bulletin 40. / Boas, Franz. (1922). Handbook of American Indian languages (Vol. 2)/Boas, Franz. (1933). Handbook of American Indian languages (Vol. 3)./Sapir, Edward. (1929). Central and North American languages. In The Encyclopædia Britannica: A new survey of universal knowledge (14 ed.) (Vol. 5, pp. 138-141). London.

परवर्ती विद्वानों में कैम्पबेल, गॉर्डन, काफमेन आदि भाषा वैज्ञानिकों के नाम प्रसिद्ध हैं। (Campbell, Lyle. (1997). American Indian languages: The historical linguistics of Native America. New York: Oxford University Press. / Campbell, Lyle; & Mithun, Marianne (Eds.). (1979). The languages of native America: Historical and comparative assessment. Austin: University of Texas Press./Gordon, Raymond G., Jr. (Ed.). (2005). Ethnologue: Languages of the world (15th ed.). Dallas, TX: SIL International./ Kaufman, Terrence. (1990). Language history in South America: What we know and how to know more. In D. L. Payne (Ed.), Amazonian linguistics: Studies in lowland South American languages/ Kaufman, Terrence. (1994). The native languages of South America. In C. Mosley & R. E. Asher (Eds.), Atlas of the world's languages.)

III. अफ्रीकी महाद्वीप के भाषा परिवार :–

एशिया महाद्वीप के सामी परिवार की भाषाएँ इस महाद्वीप के उत्तरी भाग में भी बोली जाती हैं। महाद्वीप के इसी भाग में हैमेटिक परिवार की भाषाएँ भी बोली जाती हैं। कुछ भाषा वैज्ञानिक भाषा परिवारों के अन्तर्गत इस भाषा परिवार को 'सामी–हामी' (सेमेटिक–हेमेटिक) भाषा परिवार के नाम से पुकारते हैं।

सामी परिवार की अरबी तथा हेमेटिक परिवार की भाषाओं में मिस्र की इजिप्शियन, सहारा क्षेत्र की कबीले, शिल्ह, ज़ेनागा और तुआरेग तथा उत्तर–पूर्वी क्षेत्र की सोमाली, चाड, हौसा अधिक प्रसिद्ध हैं। सामी एवं हेमेटिक के अतिरिक्त अफ्रीका के शेष भू–भाग की भाषाओं को तीन भाषा परिवार–समूहों में वर्गीकृत किया जाता है :

1. सूडान भाषा परिवार–समूह परिवार
2. बाण्टु भाषा परिवार– समूह परिवार
3. बुशमैन भाषा परिवार– समूह परिवार

(1. Alice Werner .The Language-Families of Africa. Adamant MediaCorporation 2. Bernd Heine and Derek Nurse.(2000) African Language., Cambridge University Press 3. Greenberg, Joseph H. (1966). The Languages of Africa (2nd ed.). Bloomington: Indiana University.)

सूडान भाषा परिवार–समूह –

इस भाषा परिवार–समूह के अन्तर्गत बहुत से भाषा–परिवार आते हैं। इन परिवारों की भाषाओं का विश्वस्त एवं प्रामाणिक वर्गीकरण एवं अध्ययन अभी तक सम्पन्न नहीं हुआ है। इन्हें प्रायः चार भागों में विभक्त किया जाता है :– 1.सेनेगल 2.एवे 3. मध्यवर्ती 4. नीलोत्तरी

प्रमुख भाषाएँ – सोन्याई, डिन्का, नूएर, शिल्लूक, अकोली, मसाई, नूबा, वर्गिमी, मोरू, कानुरी, तेम्ने, बुलोम , वुलुफ , फुलानी , क्पेल्ले , लोमा , मेण्डे , मलिंके, बम्बारा, फान्ती, त्वी, बाउले, एवे, फान, योरुबा, इबो, नूपे, मोस्सी, ज़ान्दे, संगो।

बाण्टु भाषा परिवार–समूह –

इस समूह की भाषाएँ दक्षिण अफ्रीका एवं पूर्वी अफ्रीका के एक भाग में बोली जाती हैं। इस समूह की भाषाओं के दक्षिण–पश्चिम में बुशमैन तथा उत्तर में सूडान परिवार–समूह की भाषाएँ बोली जाती हैं। इस परिवार–समूह के अन्तर्गत लगभग 150 भाषायें आती हैं। इनके वर्गीकरण के सम्बन्ध में भी विद्वानों में मतैक्य नहीं है।

प्रमुख भाषाएँ : स्वाहिली, कांगो, लूबा, न्गाला, शोना, न्यान्जा, गाण्डा, किकूयु, कम्बा, चागा, न्याम्वेसी, रुण्डी, र्वााण्डा, बेम्बा, उम्बून्दु, किम्बून्दु , हेरेरो, जुलू, सोथो।

बुशमैन भाषा परिवार–समूह –

दक्षिण अफ्रीका के आदि निवासियों को बुशमैन प्रजाति के नाम से पुकारा जाता है। डॉ0 ब्लीक एवं मिस ल्वायड ने बुशमैन भाषा परिवार–समूह की भाषाओं का अध्ययन किया है। बुशमैन भाषा परिवार–समूह की भाषा– परिवारों के तीन प्रमुख समूह हैं :–

1. नामा 2. खोरा 3. होटेण्टाट

बुशमैन भाषा परिवार–समूह की भाषाओं का लिखित साहित्य नहीं है। इन भाषाओं के बोलने वाले अलग–अलग वर्गों में आरेंज नदी से नगामी झील तक निवास करते हैं।

IV. यूरोप एवं एशिया महाद्वीपों के भाषा–परिवार :–

प्रशान्त महासागर के इंडोनिशयन भाषा–परिवार के अतिरिक्त यूरोप एवं एशिया महाद्वीपों में बोली जाने वाली भाषाओं को निम्नलिखित भाषा परिवारों में वर्गीकृत किया जा सकता है :–

1. भारत–यूरोपीय परिवार / भारोपीय परिवार
2. द्रविड़ परिवार
3. सिनो–तिब्बत परिवार (चीनी – तिब्बत परिवार)
4. आग्नेय/आस्ट्रिक/आस्ट्रो–एशियाटिक परिवार
5. सामी/सेमेटिक परिवार
6. यूराल–अल्ताई परिवार
7. काकेशस परिवार

1. भारोपीय परिवार :–

भारत–यूरोपीय परिवार का महत्व जनसंख्या, क्षेत्र–विस्तार, साहित्य, सभ्यता, संस्कृति, वैज्ञानिक प्रगति, राजनीति एवं भाषा विज्ञान– इन सभी दृष्टियों से निर्विवाद है।

भारत–यूरोपीय परिवार को विभिन्न नामों से अभिहित किया गया है।आरम्भ में भाषा विज्ञान के क्षेत्र में जर्मन विद्वानों ने उल्लेखनीय कार्य किया और उन्होंने इस परिवार का नाम 'इंडो–जर्मनिक' रखा। यूरोप के इटली, फ्रांस, स्पेन, पुर्तगाल, रोमानिया, रूस , पोलैण्ड आदि अन्य देशों में भी इसी परिवार की भाषाएँ बोली जाती हैं, पर वे न तो भारतीय शाखा के अन्तर्गत आती हैं और न जर्मनिक शाखा के।यूरोप के अन्य देशों के विद्वानों को यह नाम इसी कारण स्वीकृत नहीं हुआ। इसका एक और कारण था। प्रथम महायुद्ध के बाद जर्मनी के प्रति यूरोप के देशों की जो द्वेष–भावना थी, उसने भी इस नाम को ग्रहण करने में बाधा पहुँचायी। इस भाषा–परिवार के साथ जर्मनी का नाम संपृक्त करना यूरोप के अन्य देशों के विद्वानों को स्वीकार्य नहीं हुआ। जर्मन विद्वान आज भी इस परिवार को इंडो–जर्मनिक ही कहते हैं।

कुछ विद्वानों ने इस परिवार को आर्य परिवार कहा तथा कुछ विद्वानों ने इस परिवार के लिए भारत–हित्ती (इंडो–हित्ताइत) नाम सुझाया। सन् 1893 ई0 में एशिया माइनर के बोगाजकोई नामक स्थान की पुरातात्विक खुदाई के प्रसंग में कुछ कीलाक्षर लेख मिले, जिन्हें 1917 में चेक विद्वान होज्नी ने पढ़कर प्रतिपादित किया कि हित्ती भारत–यूरोपीय परिवार की ही भाषा है। हित्ती के सम्बन्ध में एक और मान्यता भी सामने आयी कि वह आदि भारत–यूरोपीय भाषा से संस्कृत, ग्रीक, लातिन की तरह उत्पन्न नहीं हुई बल्कि उसके समानान्तर प्रयुक्त होती थी। इस तरह वह आदि भारत–यूरोपीय भाषा की पुत्री न होकर बहन हुई। अतः इस परिवार का नाम भारत–हित्ती रखने का प्रस्ताव हुआ। दोनों नाम चल नहीं पाए। विद्वानों को ये नाम स्वीकार न हो सके।

भारत–यूरोपीय (इंडो–यूरोपीयन) नाम का प्रयोग पहले–पहले फ्रांसीसियों ने किया। भारत–यूरोपीय नाम इस परिवार की भाषाओं के भौगोलिक विस्तार को अधिक स्पष्टता से व्यक्त करता है । यद्यपि यह भी सर्वथा निर्दोष नहीं है। इस वर्ग की भाषाएँ न तो समस्त भारत में बोली जाती हैं और न समस्त यूरोप में। भारत एवं यूरोप में अन्य भाषा परिवारों की भाषाएँ भी बोली जाती हैं। यह नाम अन्य नामों की अपेक्षा अधिक मान्य एवं प्रचलित हो गया है तथा भारत से लेकर यूरोप तक इस परिवार की भाषाएँ प्रमुख रूप से बोली जाती हैं, इन्हीं कारणों से इस नाम को स्वीकार किया जा सकता है।

भाषा परिवार का महत्व :–

1. विश्व की अधिकांश महत्वपूर्ण भाषाएँ इसी परिवार की हैं। ये भाषाएँ विश्व के विभिन्न देशों की राजभाषा/सह – राजभाषा हैं तथा अकादमिक, तकनीकी एवं प्रशासनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। उदाहरणार्थ : अंग्रेजी, हिन्दी–उर्दू, स्पेनी, फ्रेन्च, जर्मन, रूसी, बंगला।
2. विश्व की आधी से अधिक आबादी भारोपीय परिवार में से किसी एक भाषा का व्यवहार करती है। यह व्यवहार मातृभाषा/प्रयोजनमूलक भाषा के रूप में होता है।
3. हम पूर्व में यह संकेत कर चुके हैं कि विश्व में 10 करोड़ (100 मिलियन) से अधिक व्यक्तियों द्वारा बोली जाने वाली मातृभाषाओं की संख्या 10 है। इन 10 भाषाओं में से चीनी, अरबी एवं जापानी के अतिरिक्त शेष 7 भाषाएँ भारोपीय परिवार की हैं :– 1. हिन्दी 2. अंग्रेजी 3. स्पेनी 4. बंगला 5. पुर्तगाली 6. रूसी 7. जर्मन
4. धर्म, दर्शन, संस्कृति एवं विज्ञान सम्बन्धी चिन्तन जिन शास्त्रीय भाषाओं में मिलता है उनमें से अधिकांश भाषाएँ इसी परिवार की हैं।

   यथा : संस्कृत, पालि, प्राकृत, लैटिन, ग्रीक, अवेस्ता (परशियन)
5. भारोपीय परिवार की भाषाएँ अमेरिका से लेकर भारत तक बहुत बड़े भूभाग में बोली जाती हैं।

आदि / आद्य भारत–यूरोपीय भाषा की विशेषताएँ :

(1) प्राचीन भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से पता चलता है कि आदि भारत–यूरोपीय भाषा संश्लेषात्मक थी।

(2) इस भाषा में विभक्ति–प्रत्ययों की बहुलता थी।वाक्य में शब्दों का नही अपितु पदों का प्रयोग होता था।

(3) मुख्यतः धातुओं से शब्द निष्पन्न होते थे।

(4) उपसर्गों का सम्भवतः अभाव था। उपसर्गों के बदले पूर्ण शब्दों का प्रयोग होता था जो बाद में घिसते घिसते परिवर्तित हो गए और स्वतन्त्र रूप से प्रयुक्त होने की क्षमता खोकर उपसर्ग कहलाने लगे।

(5) इस भाषा में संज्ञा पदों में तीन लिंग – पुंलिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसकलिंग तथा तीन वचन – एकवचन, द्विववचन, बहुवचन थे।

(6) तीन पुरुष थे– उत्तम, मध्यम, अन्य ।

(7) आठ कारक थे। बाद में ग्रीक एवं लैटिन में कुछ कारकों की विभक्तियॉ छँट गयीं।

(8) क्रिया में फल का भोक्ता कौन है इस आधार पर आत्मनेपद और परस्मैपद होते थे। यदि फल का भोक्ता स्वयं है तो आत्मनेपद का प्रयोग होता था और यदि दूसरा है तो परस्मैपद का प्रयोग होता था।

(9) क्रिया के रूपों में वर्तमान काल था। क्रिया की निष्पन्नता पूर्ण हुई अथवा नही – इसको लेकर सामान्य, असम्पन्न एवं सम्पन्न भेद थे।

(10) समास इस भाषा की विशेषता थी।

(11) भाषा अनुतानात्मक थी । अनुतान से अर्थ में अन्तर हो जाता था। भाषा संगीतात्मक थी इसलिए उदात्त आदि स्वरों के प्रयोग से अर्थ बोध में सहायता ली जाती थी। वैदिक मन्त्र इसके उदाहरण हैं जिनके उच्चारण में उदात्त, अनुदात्त, स्वरित का प्रयोग आवश्यक माना जाता है। प्राचीन ग्रीक में भी स्वरो का उपयोग होता था। बाद में चलकर अनुतान का स्थान बलाघात ने ले लिया।

भारत –यूरोपीय परिवार की शाखाएँ / उपपरिवार

1. केल्टिक – मध्य यूरोप के केल्टिक भाषी लगभग दो हजार वर्ष पूर्व ब्रिटेन के भू–भाग में स्थानान्तरित हुए थे। जर्मेनिक ऐंग्लो सेक्सन लोगों के आने के कारण ये केल्टिक भाषी वेल्स, आयरलैंड, स्काटलैंड चले गए।

2. जर्मेनिक – अंग्रेजी, डच, फ्लेमिश, जर्मन, डेनिश, स्वीडिश, नार्वेजियन

3. लैटिन / रोमांस / इताली – फ्रांसीसी , इतालवी , रोमानियन , पुर्तगाली , स्पेनी

4. स्लाविक – रूसी, पोलिश, सोरबियन, स्लोवाक, बलगारियन।

5. बाल्तिकः – लातवी

6. हेलेनिक – ग्रीक

7. अलबानी – इलीरी

8. अंतोलियन –

9. प्रोचियन – आरमीनी।

10. ईरानी – परशियन, अवेस्ता , फारसी, कुर्दिश, पश्तो, ब्लूची

11. भारतीय आर्य भाषाएँ– इनका विवरण आगे प्रस्तुत किया जाएगा।

12. तोखारी– इस भाषा के सन् 1904 ई0 में मध्य एशिया के तुर्किस्तान के तुर्फान प्रदेश में कुछ हस्तलिखित पुस्तकें एवं पत्र मिले जिन्हें पढ़कर प्रोफेसर सीग की यह मान्यता है कि यह भाषा भारत–यूरोपीय परिवार के केंतुम् वर्ग की भाषा है।

13. हित्ती –इस भाषा के सन् 1893 ई0 में एशिया माइनर के बोगाज़कोई नामक स्थान की पुरातात्विक खुदाई के प्रसंग में कुछ कीलाक्षर लेख मिले, जिन्हें 1917 में चेक विद्वान होज्नी ने पढ़कर यह स्थापना की कि हित्ती भारत–यूरोपीय परिवार की ही भाषा है।

अस्कोली नामक भाषाविज्ञानी ने 1870 ई0 में इन भाषाओं को दो वर्गों में बाँटा। इन भाषाओं की ध्वनियों की तुलना के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि आदि भारत–यूरोपीय भाषा की कंठ्य ध्वनियॉ कुछ शाखाओं में कंठ्य ही रह गयीं और कुछ में संघर्षी (श स ज़) हो गयीं। इस प्रवृत्ति की प्रतिनिधि भाषा के रूप में उसने लातिन और अवेस्ता को लिया और सौ के वाचक शब्दो की सहायता से अपने निष्कर्ष को प्रमाणित किया। लातिन में सौ को केन्तुम् कहते हैं और

अवेस्ता में सतम्। इसीलिए उसने केन्तुम् और सतम् वर्गों में समस्त भारत–यूरोपीय भाषाओं को विभाजित किया।

सतम् वर्ग	केन्तुम् वर्ग
1. भारतीय – शतम्	1. लातिन – केन्तुम्
2. ईरानी – सतम्	2. ग्रीक – हेकातोन
3. बाल्तिक – ज़िम्तस	3. जर्मेनिक – हुन्द
4. स्लाविक – स्तो	4. केल्टिक – केत्
	5. तोखारी – कन्ध

भारोपीय परिवार की भाषाओं की विशेषताएँः

(1) आरम्भ में इस परिवार की भाषाएँ संश्लेषात्मक थीं किन्तु अब इनमें कई विश्लेषणात्मक हो गयी हैं। संस्कृत और हिन्दी के निम्नलिखित रूपों की तुलना से यह बात स्पष्ट हो जाएगीः

संस्कृत	हिन्दी
देवम्	देव को
देवेन	देव से
देवाय	देव के लिए
देवात्	देव से
देवस्य	देव का
देवे	देव में

(2) शब्दों की रचना उपसर्ग , धातु और प्रत्यय के योग से होती है। आरम्भ में उपसर्ग स्वतंत्र सार्थक शब्द थे किन्तु आगे चलकर वे स्वयं स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त होने में असमर्थ हो गए।

(3) वाक्य–रचना शब्दों से नहीं पदों से होती है अर्थात् शब्दों में विभक्तियाँ लगाकर पदों की रूप सिद्धि की जाती है और विभक्तियों के द्वारा ही पदों का पारस्परिक अन्वय सिद्ध होता है। शब्द में विभक्ति लगे बिना वाक्य नहीं बनता।

(4) आदि / आद्य भारत–यूरोपीय भाषा में समास बनाने की जो प्रवृत्ति थी, वह भारत – यूरोपीय भाषाओं में भी रही।

(5) अनुतान की चर्चा हो चुकी है।

(6) भारत–यूरोपीय परिवार की भाषाओं में प्रत्ययों का अधिक्य है।

(1. P. Baldi (1983). An Introduction to the Indo-European Languages 2. S. K. Chatterji (2d ed. 1960) Indo-Aryan and Hindi 3. A. M. Ghatage (2d ed. 1960) Historical Linguistics and Indo-Aryan Languages 4. C. P. Masica, The Indo-Aryan Languages (1989))

2. द्रविड़ परिवार :–

इस परिवार की भाषाएँ मुख्य रूप से नर्मदा एवं गोदावरी नदियों के दक्षिणी भाग से लेकर कन्याकुमारी तक बोली जाती हैं। इस परिवार की भाषाएँ उत्तरी श्रीलंका, लक्षद्वीप, पाकिस्तान एवं अफगानिस्तान के सीमान्त भूभाग (मुख्यतः बिलोचिस्तान) तथा भारत में मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा के कुछ भागों में भी बोली जाती हैं।

द्रविड़ परिवार के भौगोलिक स्वरूप पर विचार –

टी0पी0 मीनाक्षीसुन्दरन् ने 'तमिल भाषा का इतिहास' पुस्तक में द्रविड़ परिवार की भाषाओं के भौगोलिक क्षेत्र के सम्बन्ध में निम्न टिप्पणी की है :–

'जहाँ तक द्रविड़ भाषी क्षेत्र का प्रश्न है, वह ब्राहुई क्षेत्र को छोड़कर, लगातार है – दक्षिण भारत और श्रीलंका का उत्तरी भाग। तमिल, मलयालम, कन्नड़ और तेलुगु – ये साहित्यिक भाषाएँ समुद्रतटवर्ती प्रदेशों और उनके आन्तरिक भागों में बोली जाती हैं। यह एक विचित्र संयोग है कि ऐसी द्रविड़ भाषाएँ, जिनका इतिहास नहीं मिलता, भौगोलिक दृष्टि से ऊँचे क्षेत्रों में ही बोली जाती हैं – जैसे ब्लूचिस्तान के पठार पर , उत्तर भारत और दकन के मध्यवर्ती इलाके में और दक्षिण में छोटे–छोटे पहाड़ी भागों में। तमिल भाषा का क्षेत्र वर्तमान मद्रास राज्य (तमिलनाडु) है। मलायालम केरल में बोली जाती है, तेलुगु आन्ध्र प्रदेश में और कन्नड़ मैसूर में। किन्तु इन सभी क्षेत्रों के समीपवर्ती प्रदेश द्विभाषी हैं। मद्रास के उत्तर में तेलुगु का क्षेत्र पड़ता है और पश्चिम में कन्नड़ और मलयालम का। तुलु मंगलौर के आसपास बोली जाती है। कोडगु कुर्ग के निवासियों की मातृभाषा है, जो अब मैसूर राज्य का अंग है। बड़गा, कोटा और टोडा नीलगिरि के क्षेत्रों में बोली जाती हैं। तेलुगु–प्रदेश के एक ओर उड़ियाभाषी क्षेत्र पड़ता है और दूसरी ओर मराठी–भाषी क्षेत्र। तुलुगु के ही पड़ोस में गोंडी का क्षेत्र है। कुइ और कोण्डा उस पठार पर बोली जाती हैं, जो

महानदी घाट के दोनों ओर पड़ता है। कोलामी और परजी मध्यप्रदेश और हैदराबाद में बोली जाती हैं। कन्नड़ प्रदेश मराठी, कोंकणी, तेलुगु और तमिलभाषी क्षेत्रों से घिरा हुआ है। गोंडी की सीमाओं पर तेलुगु, कोलामी, मुण्डा और मराठी हैं। यह अनोखा तथ्य है कि साहित्यरहित द्रविड़ भाषाओं को बोलने वाले पहाड़ों पर मिलते हैं। छोटा नागपुर में बोली जाने वाली गदबा, कुरुख या ओरांव और राजमहल में बोली जाने वाली माल्तो के अड़ोस–पड़ोस में मुण्डा भाषाएँ व्याप्त हैं। ब्राहुई पश्चिमी पाकिस्तान के पहाड़ी इलाकों में व्यवहृत होती है। (दे0 – तमिल भाषा का इतिहास, पृ0 16 – 17, टी0पी0 मीनाक्षीसुन्दरन्, अनुवादक : डॉ0 रमेशचन्द्र महरोत्रा, मध्यप्रदेश ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, प्रथम संस्करण , 1984)

डॉ0 मीनाक्षीसुन्दरन् ने द्रविड़ परिवार की निम्न बीस भाषाओं का उल्लेख किया है –

1. तेलुगु 2. तमिल 3. कन्नड़ 4. मलयालम 5. तुलु 6. कुरुख 7. कुइकुवि 8. गोंडी 9. बडगा 10 कोडगु 11. गदबा 12. इरुक 13. कोलामी 14. कुरवा 15. माल्तो 16. परजी 17. कोया 18. कोण्डा 19. नइक्कदी और नकी पोदी 20. कोटा और टोडा (दे0 वही, पृ0 15)

द्रविड़ परिवार की ज्ञात भाषाओं में प्रथम चार भाषाएँ प्रधान हैं। उनमें साहित्य है और अब तो उनकी भौगोलिक सीमाओं का राज्यवार निर्धारण भी हो गया है। शेष 16 भाषाएँ साहित्यरहित हैं और ऐसी भाषाएँ बोलने वाले प्रधान रूप से पहाड़ों एवं जंगलों में निवास करते हैं।

डॉ0 भक्त कृष्णमूर्ति ने द्रविड़ परिवार की भाषाओं का वर्गीकरण भौगोलिक एवं भाषावैज्ञानिक आधार पर किया है :–

(क) दक्षिण की द्रविण भाषाएँ :– तमिल, मलयालम, टोडा, कोटा, कन्नड़, कोडगु, इरुक, कोरगा और तुलु। (कुरुबा, कसबा और कडा इन तीन बोलियों की स्थिति स्पष्ट नहीं है)

(ख) दक्षिण – केन्द्रीय द्रविड़ भाषाएँ – तेलुगु, गोंडी (कोया समेत), कोंड, कुई, कुवि, पेंगो, मण्डा और अवि (या इण्डि)

(ग) केन्द्रीय द्रविड़ भाषाएँ – कोलामी, नाइकि, परजी और गदबा (ओलारि और कोणकोर–उपबोलियाँ हैं।)

(घ) उत्तर की द्रविड़ भाषाएँ – कुरुख, माल्तो और ब्राहुई ।

कोष्ठकों में दी गई बोलियों को छोड़ दें तो कुल 24 भाषाएँ होती हैं और कोष्ठकों की बोलियों को जोड़ लें तो संख्या 29 तक पहुँच जाती है। (दे0 XI All India Conference of Dravidian Linguists, P.25, Osmania University, Hyderabad, June 5-7, 1981)

डा0 बी0 रामकृष्ण रेड्डी ने साहित्येतर द्रविड़ भाषाओं का सर्वेक्षण (1965–1980 तक) किया । तेलुगु के ही एक अन्य विद्वान डॉ0 पी0एस0 सुब्रह्मण्यम् ने अपनी पुस्तक 'द्राविड़ भाषलु' (1977 ई0 में प्रकाशित) में द्रविड़ भाषाओं का विकास क्रम प्रस्तुत किया जिसका

सारांश डॉ0 कर्णराज शेषगिरिराव ने द्रविड़ भाषाओं का वर्गीकरण प्रस्तुत करते हुए दिया है। (दे0 – द्रविड़ भाषाओं का वर्गीकरण, डॉ0 कर्णराज शेषगिरिराव, सम्मेलन पत्रिका, पृ0 84–86, भाग 67, संख्या 1–2, पौष ज्येष्ठ, शक 1902–3, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग)

डॉ0 पी0एस0 सुब्रह्मण्यम् का वर्गीकरण आदि / आद्य द्रविड़ भाषा की संकल्पना पर आधारित है और वे उस आदि / आद्य द्रविड़ भाषा को भी तीन भागों में विभाजित करते हैं। यह विभाजन भौगोलिक आधार पर है – 1. दक्षिण वर्ग की भाषाएँ 2. मध्य द्रविड़ वर्ग की भाषाएँ 3. उत्तर द्रविड़ वर्ग की भाषाएँ । उन्होंने प्रत्येक वर्ग के लिए आदि / आद्य द्रविड़ भाषा को आधार माना है और तदनन्तर आदि / आद्य द्रविड़ को तीन भागों (दक्षिण, मध्य और उत्तर) में विभाजित किया है :–

आदि / आद्य द्रविड़ भाषा

1. आदि / आद्य दक्षिण द्रविड़ 2. आदि / आद्य मध्य द्रविड़ 3. आदि / आद्य उत्तर द्रविड़

I. आदि / आद्य दक्षिण द्रविड़ भाषाओं का वर्गीकरण :

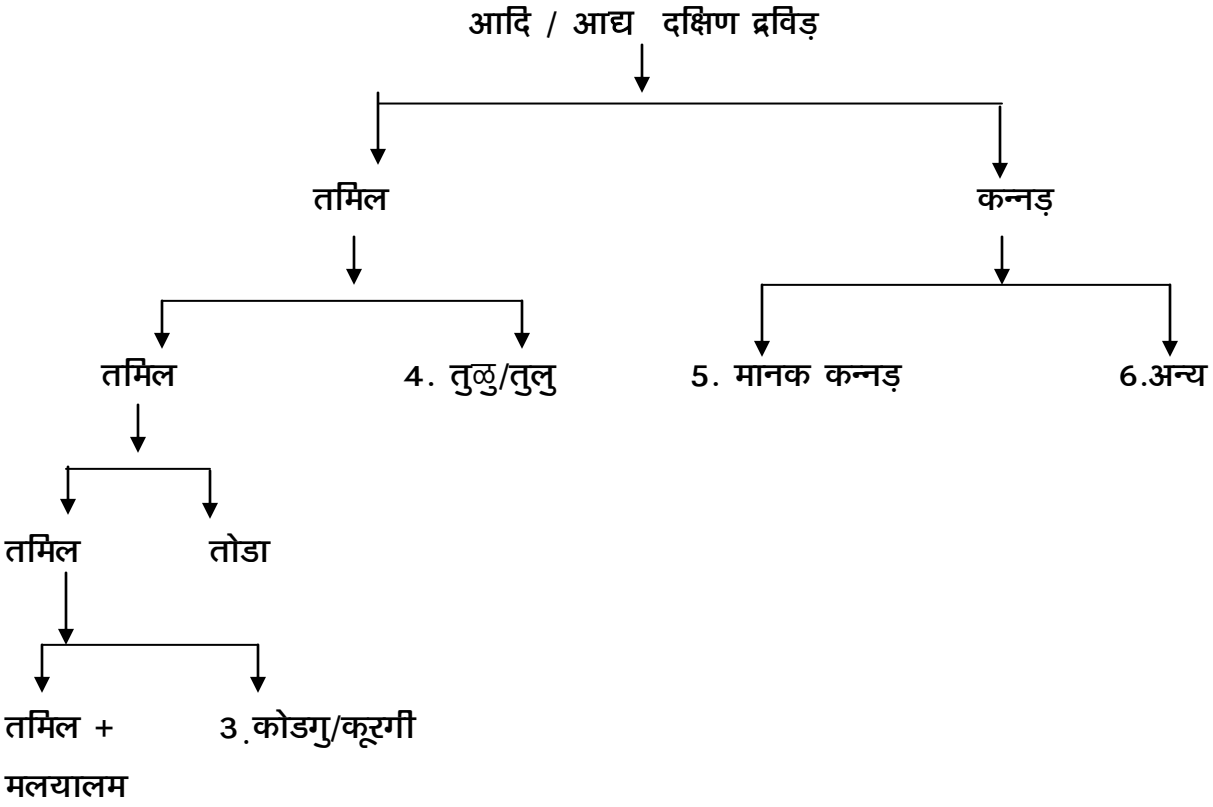

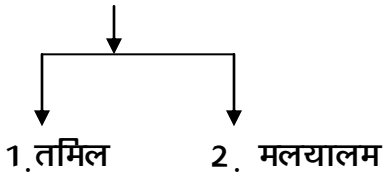

Ⅱ. आदि / आद्य मध्य द्रविड़ वर्ग की भाषाओं का वर्गीकरण :–

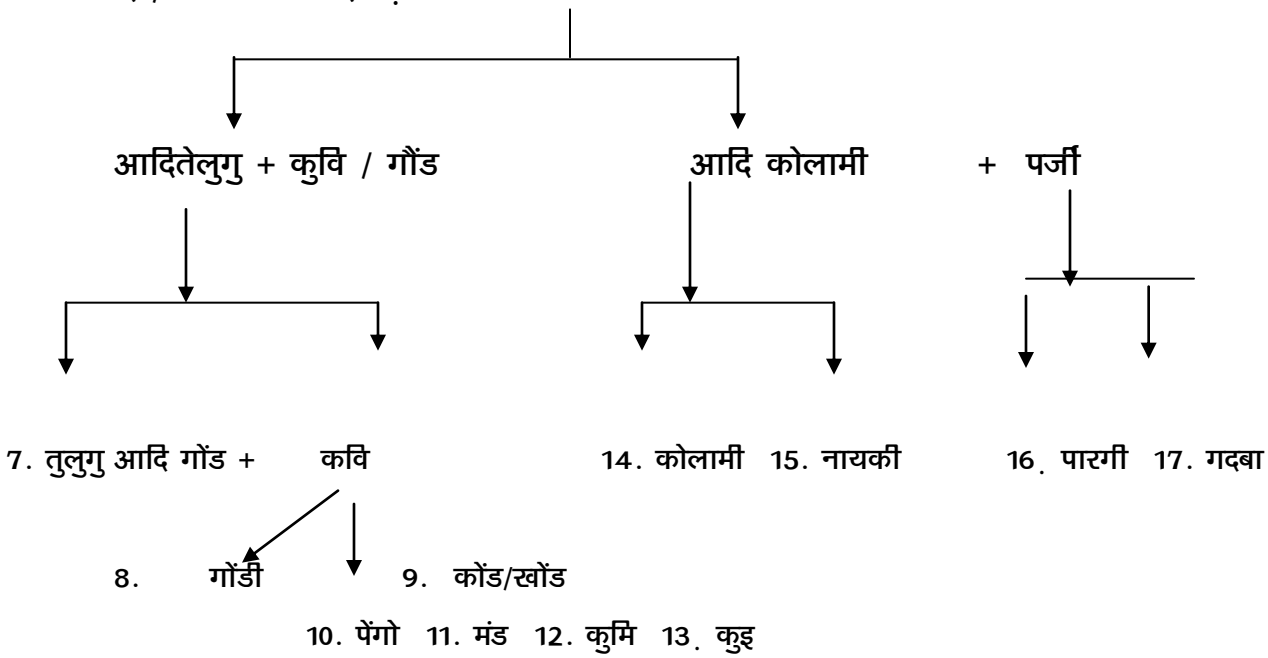

Ⅲ. आदि / आद्य उत्तर द्रविड़ वर्ग की भाषाओं का वर्गीकरण :–

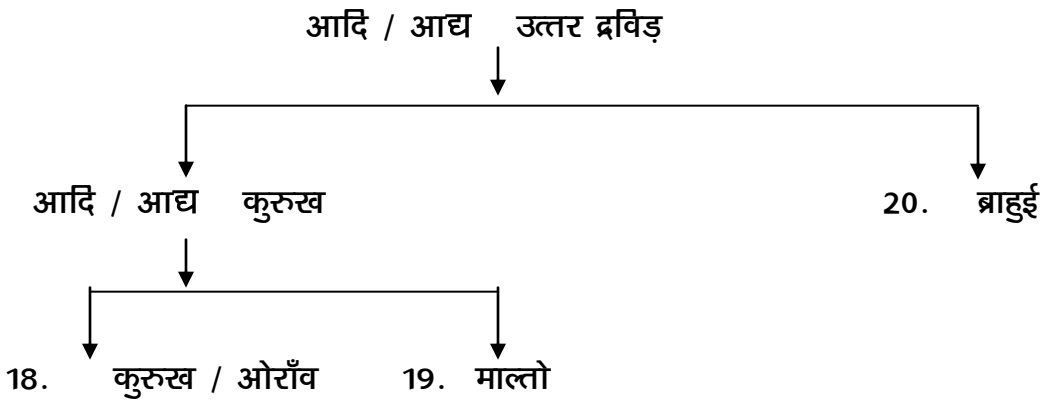

उक्त विभाजन विकास क्रम की दृष्टि से है। आधुनिक भाषाओं के संदर्भ में एककालिक दृष्टि से द्रविड़ परिवार की भाषाओं का वर्गीकरण लेखक ने आगे प्रस्तुत किया है।

3.आग्नेय (आस्ट्रो–एशियाटिक) परिवार :–

इस परिवार की भाषाएँ भारत से वियतनाम तक के भूभाग में यत्र तत्र बोली जाती हैं। इसकी तीन शाखाएँ हैं:– 1. वियत–मुआँग शाखा 2. मान–ख्मेर शाखा 3. मुंडा शाखा

(www.vietthu.net /www.khmerlanguage.com)

इस परिवार की भाषाओं को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है :–

आग्नेय (आस्ट्रो–एशियाटिक)

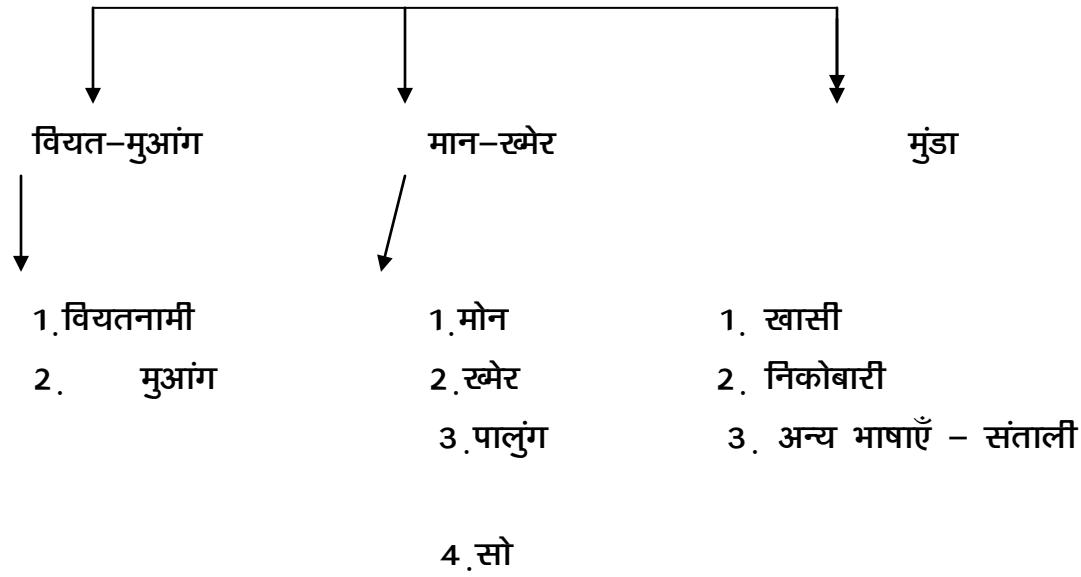

4.सिनो – तिब्बत परिवार :–

इस परिवार की भाषाएँ चीन, थाईलैण्ड, तिब्बत, म्यांमार एवं पूर्वोत्तर भारत के भूभाग में बोली जाती हैं। इस परिवार की भाषाओं की विशेषता यह है कि ये एकाक्षर तान भाषाएँ हैं। भारोपीय परिवार की भाषाओं में वाक्य के अंत में अनुतान स्तर मिलते हैं। अनुतान स्तर भेद से सामान्य वाक्य प्रश्नवाक्य में बदल जाता है। इस परिवार की भाषाओं में प्रत्येक शब्द एक अक्षर द्वारा ही निर्मित होते हैं तथा प्रत्येक अक्षर के अनेक तान होते हैं जिससे उसके अर्थ बदल जाते हैं। इस परिवार की भाषाओं की सामग्री के आधार पर आदि / आद्य सिनो–तिब्बत भाषा की पुनर्रचना एवं व्युत्पत्ति कोष निर्माण का कार्य चल रहा है। (http:// stedt.berkeley.edu) (phuh

eankfju ds fy, osc lkbV& zhongwen.com/chat.htm / zhongwen.com / frCcr&cehZ ds fy, osc lkbV& thor.prohosting.com/~linguist/burmese.htm/www.dharma-haven.org/tibetan/language.htm)

इस परिवार की भाषाओं को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है :–

सिनो / चीनी –तिब्बत

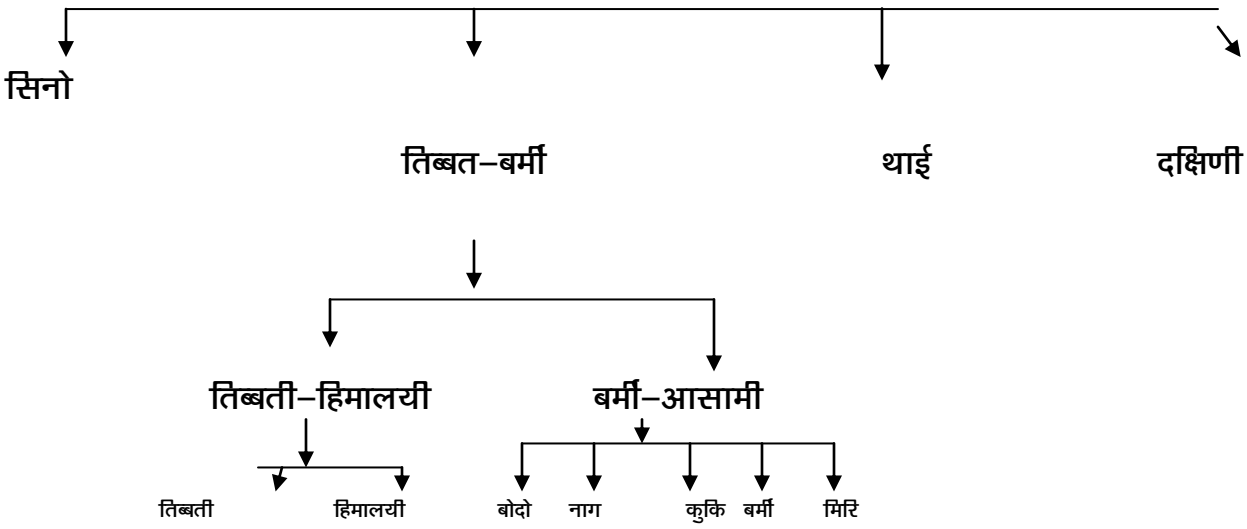

1. **सिनो वर्ग** – 1. मंदारिन 2. वू 3. अमोय 4. गन 5. मिन 6. हक्का 7. जिआङ 8. केंटोनी

2. **तिब्बत – बर्मी वर्ग** – (भारतीय भाषाओं के संदर्भ में इस वर्ग की भाषाओं के उदाहरण दिए जायेंगे)

3. **थाई वर्ग** – 1. थाई 2. लाओ 3. चुआङ 4. तुङ 5. नुङ 6. शान 7. कमसुइ 8. जुहाङ 9. ली

4. **दक्षिणी वर्ग** – 1. मिआओ 2. याओ 3. से

5.सामी/सेमेटिक परिवार :–

बाइबिल के आख्यान के अनुसार हजरत नौह के ज्येष्ठ पुत्र ''सैम'' अरब, असीरिया एवं सीरिया के निवासियों एवं यहूदी–जाति के लोगों के आदि पुरुष हैं। इन्हीं के कारण इस क्षेत्र की भाषाओं को सामी/सेमेटिक भाषा परिवार के नाम से पुकारा जाता है। इस परिवार की पूर्वी शाखा की प्राचीन भाषाएँ – आसिरीय, आक्कदीन एवं बेबिलोनीय तथा पश्चिमी उपशाखा की प्राचीन भाषाएँ–कनानीय, फोएनीशीय एवं आरामीय हैं।

इस परिवार की भाषाओं के अन्तर्गत अरबी एवं हिब्रू भाषाएँ आती हैं। अरबी भाषा के प्राचीनतम उपलब्ध लेख 328 ई0 के हैं। बाइबिल का ओल्ड टेस्टामेण्ट हिब्रू भाषा में लिखा गया है। इस्लाम धर्म की 'कुरान' अरबी भाषा में है। इस्लाम धर्म के प्रचार–प्रसार के कारण अरबी भाषा का विस्तार पूर्वी एशिया एवं अफ्रीका के भू–भाग तक है। फारसी, तुर्की एवं भारतीय भाषाओं विशेष रूप से उर्दू आदि पर अरबी भाषा का बहुत प्रभाव पड़ा है। यूरोप की भाषाओं ने भी अरबी से शब्दों का आदान किया है।वर्तमान हिब्रू तथा अरबी जीवित भाषाएँ हैं। उत्तर अफ्रीका, पश्चिम एशिया एवं खाड़ी के देशों – 1. मोरक्को 2. अल्ज़ीरिया 3. लीबिया 4. सूडान 5. मिस्र 6. सीरिया 7. जोर्डन 8. इराक 9. संयुक्त अरब अमीरात 10. यमन आदि में अरबी भाषा के जो भाषिक रूप बोले जाते हैं, उन्हें कुछ विद्वान 'अरबी भाषा' के उपभाषिक रूप मानते हैं तथा कुछ इन्हें भिन्न–भिन्न भाषाओं के रूप में स्वीकार करते हैं। **(De Lacy O Leary : Comparative grammar of the semitic languages / Karin C. Ryding : A Reference Grammar of Modern Standard Arabic, Cambridge University Press)**

6. यूराल–अल्ताई परिवार :–

बहुत से भाषा वैज्ञानिक इस परिवार की भाषाओं को दो भिन्न भाषा–परिवारों में वर्गीकृत करते हैं :– 1. यूराल परिवार 2. अल्ताई परिवार । इन दो परिवारों की भाषाओं में ध्वनि एवं शब्दावली की भिन्नताएँ अधिक हैं। इस अपेक्षा से भिन्न भाषा–परिवार मानने का मत तर्क संगत प्रतीत होता है। मगर व्याकरण एवं भाषिक संरचना की दृष्टि से इन दो परिवारों की भाषाओं में एकरूपता है। इस अपेक्षा से इनको एक भाषा परिवार के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। यूराल पर्वत से यूरोप महाद्वीप के क्षेत्र में यूराल उप परिवार की भाषाएँ तथा मंगोलिया के आसपास स्थित अल्ताई पर्वत से जापान तक के क्षेत्र में अल्ताई उप परिवार की भाषाएँ बोली जाती हैं :–

यूराल उप परिवार की दो शाखायें हैं :– 1. फीनी–उग्री 2. समोयेदी

अल्ताई उप परिवार की पाँच शाखायें हैं :– 1.तातारी / तुर्की 2. मंगोली 3. तुंगूज़ी 4. कोरियन 5. जापानी

इस परिवार को फिनो–तातारिक, सीदियन, तूरानी, फिनो–उग्रीय नामों से भी अभिहित किया जाता है।

प्रमुख भाषाएँ :– 1. फिनी या सुओमी या फिन्नीय 2. मग्यार (हंगरी) 3. तुंगूज़ी 4. मंगोली 5. तुर्की 6. गिरगिज़ 7. उज़्बेगी 8. कज़ाकी 9. तुर्कमेनी 10. तातारी 11. मंगोली 12. मांचु 13. कोरियन 14. जापानी।

(Shirokogoroff, S. M. (1931). Ethnological and linguistical aspects of the Ural-Altaic hypothesis. Peiping, China: The Commercial Press.) / (en.wikipedia.org/wiki/Ural-Altaic_languages)

7. काकेशस परिवार :–

इस परिवार की भाषाओं का क्षेत्र कृष्ण सागर से लेकर कैस्पियन सागर के बीच है। मूल क्षेत्र कोकोशस पर्वतमाला है।

प्रमुख भाषाएँ : इंगुश , कबर्दियन, चेचेन, जार्जियन
(www.armazi.demon.co.uk/georgian/grammar.html / members.tripod.com/ggdavid/georgia/language / ingush.narod.ru / ingush.berkeley.edu:7012/ingush.html)

भारत की भाषाएँ : बहुभाषिकता

भारत में भाषाओं, प्रजातियों, धर्मों, सांस्कृतिक परम्पराओं एवं भौगोलिक स्थितियों का असाधारण एवं अद्वितीय वैविध्य विद्यमान है। विश्व के इस सातवें विशालतम देश को पर्वत तथा समुद्र शेष एशिया से अलग करते हैं जिससे इसकी अपनी अलग पहचान है, अविरल एवं समृद्ध सांस्कृतिक विरासत है , राष्ट्र की अखंडित मानसिकता है। 'अनेकता में एकता' तथा 'एकता में अनेकता' की विशिष्टता के कारण भारत को विश्व में अद्वितीय सांस्कृतिक लोक माना जाता है।

भाषिक दृष्टि से भारत बहुभाषी देश है। यहाँ मातृभाषाओं की संख्या 1500 से अधिक है (दे0 जनगणना 1991, रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इण्डिया) । इस अध्याय में इसी जनगणना के आधार पर भाषाओं के बोलने वालों के आँकड़े प्रस्तुत किए जायेंगे। इस जनगणना के अनुसार 10,000 से अधिक लोगो द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं की संख्या 114 है। (जम्मू और कश्मीर की जनगणना न हो पाने के कारण इस रिपोर्ट में लद्दाखी का नाम नहीं है। इसी प्रकार इस जनगणना में मैथिली को हिन्दी के अन्तर्गत स्थान मिला है। अब मैथिली भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची की एक परिगणित भाषा है।) लद्दाखी एवं मैथिली को सम्मिलित करने पर 10,000 से अधिक लोगो द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं की संख्या 116 हो जाती है।

यूरोप एवं एशिया महाद्वीप के भाषा परिवारों में से 'दक्षिण एशिया' में मुख्यतः चार भाषा परिवारों की भाषायें बोली जाती हैं। भारत में भी सामी भाषा परिवार की 'अरबी' के अपवाद के अलावा इन्हीं चार भाषा परिवारों की भाषायें बोली जाती हैं। ये चार भाषा परिवार हैं :

Ⅰ. भारोपीय परिवार (भारत में भारत–ईरानी उप परिवार की आर्य भाषाएँ तथा दरद शाखा की कश्मीरी बोली जाती हैं। कश्मीरी को अब भाषा वैज्ञानिक भारतीय आर्य भाषाओं के अन्तर्गत ही मानते हैं। 'जर्मेनिक' उपपरिवार की अंग्रेजी के बोलने वाले भी भारत में निवास करते हैं जिनकी संख्या 178,598 है)

Ⅱ. द्रविड़ परिवार

Ⅲ. आग्नेय परिवार (आस्ट्रिक अथवा आस्ट्रो–एशियाटिक)

Ⅳ. चीनी–तिब्बती परिवार (इस परिवार की 'स्यामी/थाई/ताई उपपरिवार की अरुणाचल प्रदेश में बोली जाने वाली प्रमुख भाषा **'खम्टी'** को छोड़कर भारत में तिब्बत–बर्मी उपपरिवार की भाषाएँ बोली जाती हैं।)

जिन 116 भाषाओं की ओर पूर्व में संकेत किया गया है, उनमें से सात (7) भाषाएँ ऐसी हैं जिनके बोलने वाले भारत के विभिन्न राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों में निवास करते हैं तथा जिनका भारत में अपना 'भाषा क्षेत्र' नहीं है। संस्कृत प्राचीन भारतीय आर्य भाषा काल की भाषा है। मुगलों के शासनकाल के कारण अरबी तथा अंग्रेजों के शासन काल के कारण अंग्रेजी के बोलने वाले भारत के विभिन्न भागों में निवास करते हैं। सिन्धी एवं लहँदा के भाषा क्षेत्र पाकिस्तान में हैं। 1947 के विभाजन के बाद पाकिस्तान से आकर इन भाषाओं के बोलने वाले भारत के विभिन्न भागों में बस गए। 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में लहँदा बोलने वालों की संख्या 27,386 है। इस भाषा के बोलने वाले आन्ध्र प्रदेश, हरियाणा, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, राजस्थान, उ0प्र0, दिल्ली आदि में रहते हैं तथा अपनी पहचान 'मुल्तानी' के रूप में अधिक करते हैं। सिन्धी भाषा के बोलने वालों की संख्या 2,122,848 है। इस भाषा के बोलने वाले गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, राजस्थान राज्यों में अपेक्षाकृत अधिक संख्या में निवास करते हैं। ये भारत के लगभग 30 राज्यों / केन्द्रशासित प्रदेशों में फैले हुए हैं। लहँदा एवं सिन्धी दोनो भाषाओं के बोलने वालों में द्विभाषिता / त्रिभाषिता / बहुभाषिता का प्रसार हो रहा है। जो जहाँ बसा है, वहाँ की भाषा से इनके भाषा रूप में परिवर्तन हो रहा है। इसी प्रकार तिब्बती लोग भारत के 26 राज्यों में रह रहे हैं। इनकी मातृ भाषा तिब्बती है जिनकी संख्या 69,416 है। कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, उ0प्र0 , अरुणाचल प्रदेश, पश्चिम बंगाल में इनकी संख्या अपेक्षाकृत अधिक है। उर्दू जम्मू एवं कश्मीर की राजभाषा तथा आन्ध्र प्रदेश, उ0प्र0, बिहार कर्नाटक आदि राज्यों की दूसरी प्रमुख भाषा है। भाषिक दृष्टि से हिन्दी एवं उर्दू भिन्न भाषाएँ नहीं हैं तथा इस सम्बंध में आगे विचार किया जाएगा। भारतीय संविधान में उर्दू को हिन्दी से भिन्न परिगणित भाषा माना गया है। इसके बोलने वाले भारत के आन्ध्र प्रदेश, बिहार, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उ0प्र0, पश्चिम बंगाल, दिल्ली तथा तमिलनाडु में निवास करते हैं तथा भारत मे इनकी संख्या 43,406,932 है।

भाषाओं का विवरण निम्न आधारों पर प्रस्तुत किया जाएगा –

1. भाषा परिवार

2. परिगणित / अपरिगणित – भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में परिगणित भाषाओं की संख्या अब 22 है। प्राचीन भारतीय आर्य भाषा काल की संस्कृत के अलावा निम्नलिखित आधुनिक भारतीय भाषाएँ परिगणित हैं :–

1. असमिया 2. बंगला 3. बोड़ो 4. डोगरी 5. गुजराती 6. हिन्दी 7. कश्मीरी 8. कन्नड़ 9. कोंकणी 10. मैथिली 11. मलयालम 12. मणिपुरी 13. मराठी 14. नेपाली 15. उड़िया 16. पंजाबी 17. तमिल 18. तेलुगु 19. संथाली 20. सिन्धी 21. उर्दू

इन 22 परिगणित भाषाओं में से पन्द्रह भाषाएँ भारतीय आर्य भाषा उप परिवार की, चार भाषाएँ द्रविड़ परिवार की, एक भाषा (संथाली) आग्नेय परिवार की तथा दो भाषाएँ (बोड़ो, मणिपुरी) तिब्बत–बर्मी उप परिवार की हैं। 1991 की जनगणना के समय परिगणित भाषाओं की संख्या 18 थी। इस जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 83,85,83,988 में से 96.29 प्रतिशत लोग अर्थात् 80,74,41,612 लोग उन 18 परिगणित भाषाओं में से किसी एक भाषा के बोलने वाले थे।

I. भारतीय आर्य भाषाएँ

भारतीय आर्य भाषाएँ

काल की दृष्टि से भारतीय आर्यभाषाओं को तीन वर्गों में विभक्त किया जाता है।

(क) प्राचीन भारतीय आर्य–भाषा (प्रा0भा0आ0भा0)– 1500 ई0 पूर्व से 500 ई0 पूर्व तक।

(ख) मध्य भारतीय आर्य–भाषा (म0भा0आ0भा0)–500 ई0 पूर्व से 1000 ई0 तक।

(ग) आधुनिक भारतीय आर्य–भाषा (आ0भा0आ0भा0) –1000 ई0 से वर्तमान समय तक।

(क) प्राचीन भारतीय आर्य–भाषा

प्राचीनतम रूप ऋग्वेद में देखने को मिलता है। ऋग्वेद का समय अनिश्चित है। ऋग्वेद के मंत्रों को पढ़ने से ज्ञात होता है कि उसकी रचना न एक समय में हुई है और न एक स्थान में। वह कई शताब्दियों और कई स्थानों की रचना है जैसा उसमें विद्यमान भाषा–भेदों से पता चलता है। ये भाषा–भेद देश और काल के भेद के कारण हैं। ऋग्वेद के दस मंडलों में से प्रथम और दशम मंडल अपेक्षाकृत बाद की रचना माने जाते हैं।

ऋग्वैदिक साहित्य के अन्तर्गत संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् आते हैं। संहिता से उपनिषद् तक का विकास भाव–धारा की दृष्टि से ही नहीं भाषा की दृष्टि से भी महत्वपूपर्ण है। यह अन्तर शताब्दियों मे ही सम्भव हुआ । भाषिक अध्ययन की दृष्टि से ब्राह्मण ग्रन्थों का महत्व अधिक है। इसका कारण यह है कि ब्राह्मण–ग्रन्थ मुख्यतः गद्य में हैं। उनसे वाक्य–रचना की प्रणाली को जानने में सहायता मिलती है।

जिस भाषा में ऋग्वेद की रचना हुई है, वह बोलचाल की भाषा न होकर उस समय की मानक साहित्यक भाषा थी।उसके समानान्तर लोक–भाषाएँ भी रही होंगी किन्तु उनके लिखित साहित्य के अभाव के कारण उन्हें जानने का कोई साधन अब नहीं है। ऋग्वेद में वर्णित है कि जैसे सूप से सत्तू को शुद्ध किया जाता है वैसे ही बुद्धिमान लोग बुद्धिबल से परिष्कृत भाषा को प्रस्तुत करते हैं (10/ 71 – 2)। हमें प्राचीन एवं मध्यकालीन साहित्यिक भाषिक रूप ही उपलब्ध हैं, विभिन्न क्षेत्रों एवं राज्यों में सामान्य जन के द्वारा बोले जाने वाले भाषिक रूप उपलब्ध नहीं हैं। किसी काल में सामान्य रूप से साहित्यिक भाषा का आधार उस काल की मानक / सम्पर्क भाषा होती है। भाषा विकास के परम्परागत अध्ययनों को पढ़ने के बाद पाठक को यह प्रतीति होती है कि प्राचीन एवं मध्यकाल में भाषाएँ कम संख्या में बोली जाती थीं मगर आधुनिक काल में भाषाओं की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हो गई है। इस प्रकार की धारणा अवैज्ञानिक तथा अतार्किक है। इसका कारण यह है कि आधुनिक काल में सामाजिक सम्पर्क बहुत बढ़ा है तथा निरन्तर बढ़ रहा है। यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि किसी भाषा क्षेत्र में सामाजिक सम्पर्क जितना अधिक होता है, भाषा भेद उतना ही कम होता है। वैदिक साहित्य का अध्ययन करने पर इतना तो पता चल ही जाता है कि वेदों की छान्दस् भाषा को उदीच्य प्रदेश के पुरोहित सबसे शुद्ध मानते थे तथा उस काल में मध्यदेशी एवं प्राच्य आदि जन भाषाएँ भी बोली जाती थीं। डॉ० बाबूराम सक्सेना ने प्रतिपादित किया है कि ' ऋग्वेदसंहिता के सूक्ष्म अध्ययन से मालूम होता है कि उसके सूक्तों में जहाँ तहाँ बोली भेद हैं '। (मध्यदेश का भाषा विकास, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष 50, अंक 1 – 2, सं० 2002 (सन् 1945))

विद्वानों के एक वर्ग की मान्यता है कि वैदिक भाषा से लौकिक संस्कृत का विकास हुआ है। विद्वानों के दूसरे वर्ग का मत है कि संस्कृत का विकास वैदिक के बदले तद्युगीन किसी बोली से हुआ जो अनेक कारणों से महत्वपूर्ण बन गयी। वैदिक एवं लौकिक संस्कृत के भाषिक विकास के गहन अध्ययन से दूसरा मत अधिक तर्क संगत प्रतीत होता है। इसका तार्किक आधार यह भी है कि किसी लोक भाषा का संस्कारित रूप ही संस्कृत है। संस्कृत का अर्थ ही है – संस्कारित भाषा। इस वर्ग की मान्यता को समझने के लिए हम खड़ीबोली का उदाहरण ले सकते हैं। अपभ्रंश काल में शौरसेनी का सम्पर्क भाषा के रूप में व्यवहार होता था। 15 वीं शताब्दी से लेकर 18 वीं शताब्दी तक शौरसेनी की परम्परा का निर्वाह ब्रज ने अधिक किया। राजनीतिक, आर्थिक, व्यापारिक आदि कारणों से दिल्ली के चतुर्दिक बोली जाने वाली तथाकथित खड़ी बोली हिन्दी भाषा की अन्य उपभाषाओं / बोलियों की तुलना में आगे निकल गई और अन्य उपभाषाओं एवं पंजाबी आदि भाषाओं के भाषिक तत्वों के समाहार से स्वाधीनता आन्दोलन के समय सम्पूर्ण भारत की सर्वमान्य राष्ट्रभाषा बन गयी । राष्ट्रभाषा या साहित्यिक भाषा बनने का यह अर्थ नहीं कि उसके बाद हिन्दी भाषा क्षेत्र की अन्य उपभाषाओं / बोलियों का व्यवहार होना बन्द हो गया । संस्कृत भाषा भी समसामयिक अन्य लोकभाषाओं/ जनभाषाओं की तुलना में आगे निकल गयी

और भारत की सांस्कृतिक भाषा बन गयी । यह प्रश्न उपस्थित किया जा सकता है कि इसका क्या प्रमाण है संस्कृत काल में अन्य जन भाषाएँ विद्यमान थीं। इसका कारण यह है कि वे भाषिक रूप उपलब्ध नहीं हैं। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है कि साहित्य में ही यत्र तत्र कुछ उल्लेख मिलते हैं जो उस काल की भाषा – भिन्नताओं की सूचना देते हैं। उदाहरण के लिए वाल्मीकि रामायण के किष्किन्धा कांड में शुद्ध भाषा सीखने हेतु व्याकरण का अध्ययन करने तथा अपभाषित से बचने के निर्देष प्राप्त हैं। इसी रामायण के हनुमान जब राम का संदेश लेकर लंका में सीता के पास पहुँचते है तो उनके मन के द्वन्द को रचनाकार ने अभिव्यक्त किया है। द्वन्द का कारण है कि सीता को संदेश किस भाषा में दिया जाए – दैवी भाषा संस्कृत में अथवा मानुषी भाषा में (वाल्मीकि रामायण – 5/30/17 – 19)। कालिदास के कुमार सम्भव में वर्णित है कि शंकर एवं पार्वती के विवाह के अवसर पर सरस्वती शंकर से जिस भाषा में बात करती हैं उससे भिन्न भाषा में वे पार्वती से बात करती हैं। भरत मुनि ने नाना देशों के प्रसंग के अनुसार भाषिक प्रयोगों का विधान किया है।(नाट्यशास्त्र, 18/29 – 35)। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि संस्कृत भाषा काल में भी समसामयिक अन्य लोकभाषाओं/ जनभाषाओं का व्यवहार होता था, हॉलाकि वे भाषिक रूप हमें अब उपलब्ध नहीं हैं। आगे वैदिक एवं लौकिक संस्कृत भाषाओं की सामान्य प्रवृत्तियों के बारे में सूत्र शैली में सूचना दी जा रही है।

1. वैदिक एवं संस्कृत भाषाएँ श्लिष्ट योगात्मक हैं।
2. वैदिक भाषा में रूप–रचना में अधिक विविधता और जटिलता है। उदाहरणार्थ, प्रथम विभक्ति के बहुवचन में देव शब्द के देवाः और देवासः दोनों रूप मिलते हैं। इसी तरह तृतीया के एकवचन मे देवैः और देवभिः दोनों रूप मिलते हैं। संस्कृत में आकर रूप अधिक व्यवस्थित हो गए और अपवादों तथा भेदों की कमी हो गयी। उदाहरणार्थ, पूर्वोक्त दोनों वैकल्पिक रूप छँट गए और एक–एक रूप (देवाः तथा देवैः) रह गए।
3. वैदिक भाषा अनुतानात्मक है किन्तु संस्कृत बलाश्रित है।।
4. संस्कृत के समान वैदिक में भी तीन लिंग और तीन वचन होते हैं।
5. वैदिक भाषा में उपसर्ग का प्रयोग मूल शब्द से हटकर भी हो सकता है; किन्तु संस्कृत में नहीं।

(ख) मध्य भारतीय आर्य–भाषा

मध्य भारतीय आर्यभाषा–काल को प्राकृत काल भी कहते हैं। इसके तीन स्पष्ट विकास–सोपान माने जाते हैं।

(क) प्रथम प्राकृत (500 ई0 पूर्व से ई0 सन् के आरम्भ तक)– पालि; अशोक के अभिलेख ।
(ख) द्वितीय प्राकृत (ई0 सन् के आरम्भ से 500 ई0 तक)– साहित्यिक प्राकृत (महाराष्ट्री आदि)
(ग) तृतीय प्राकृत (500 ई0 से 1000 ई0 तक)– अपभ्रंश

(क) प्रथम प्राकृत (500 ई0 पूर्व से ई0 सन् के आरम्भ तक)– पालि; अशोक के अभिलेख

पालि–

पालि भाषा की उत्पत्ति को लेकर विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ विद्वान संस्कृत से पालि – प्राकृत की उत्पत्ति मानते हैं।(प्रकृतिः संस्कृतम्। तत्र भवं तत् आगतं वा प्राकृतम् – सिद्धहेमशब्दानुशासन, 1/1) । मगर पहले कहा जा चुका है कि अधिक तर्कसंगत यह मानना है कि संस्कृत के समानान्तर जो जन–भाषाएँ थीं, उन्हीं के विकसित रूप प्राकृत हैं। पालि शब्द का अर्थ क्या है और वह कहाँ की भाषा थी, इन दोनों प्रश्नों को लेकर भी विद्वानों में मतभेद हैं। पालि शब्द की निरुक्ति को लेकर अनेक कल्पनाएँ की गई हैं।

(1) पंक्ति शब्द से निम्नलिखित विकास क्रम में पालि की निष्पत्ति बतायी जाती है–

पंक्ति > पंति > पत्ति > पट्ठि > पल्लि > पालि ।

इस विकास क्रम में ध्वनि–नियम से अधिक अपनी बात प्रमाणित करने का आग्रह दीखता है। दंत्य से मूर्द्धन्य तथा फिर मूर्द्धन्य से पार्श्विक के विकास क्रम की प्रवृत्ति दिखाई नहीं देती।

2. पल्लि (गांव) से पालि को निष्पन्न बताया जाता है। पल्लि–भाषा अर्थात गांव की भाषा । इस व्युत्पत्ति में भी कठिनाइयाँ हैं। एक तो यह कि द्वित्व व्यंजन में एक व्यंजन –ल् का लोप और पूर्व स्वर का दीर्घत्व प्रथम प्राकृत काल की प्रवृत्ति के अनुकूल नहीं है दूसरी यह कि सामान्यतः इस स्थिति में ह्रस्व स्वर का दीर्घीकरण होना चाहिए था। पालि में ह्रस्व स्वर है।

3. प्राकृत > पाकट > पाअड़ > पाअल > पाल > पालि

यह स्वन परिवर्तन भी विकास क्रम की प्रवृत्ति के अनुरूप नहीं है।

4. एक विद्वान ने पाटलिपुत्र शब्द से पालि को व्युत्पन्न करने का प्रयास किया है । उनका कथन है कि ग्रीक में पाटलिपुत्र को पालिबोथ्र कहते हैं। विदेशियों द्वारा किसी शब्द के उच्चारण को भारतीय भाषा का अभिधान मानना संगत नहीं है ।

5. एक विद्धान ने पालि का सम्बन्ध 'पर्याय' शब्द से जोड़ा है –

पर्याय > परियाय > पलियाय > पालि

प्राचीन बौद्ध साहित्य में बुद्ध के उपदेश के लिए पर्याय शब्द का प्रयोग होता था इसलिए पर्याय से पालि को निष्पन्न बताया गया है । एक मत यह भी है कि 'पाल्' धातु से पालि शब्द बना है जिसका अर्थ पालन करना या रक्षा करना है। जिस भाषा के द्वारा बुद्ध के वचनों की रक्षा हुई, वह पालि है। वास्तव में पालि का सम्बन्ध बुद्ध वचनों/ बौद्ध साहित्य से ही है, इस कारण अन्तिम दो मत अपेक्षाकृत अधिक संगत हैं।

पालि किस स्थान की भाषा थी – इस सम्बंध में भी मत भिन्नता है। श्रीलंका के बौद्ध भिक्षुओं ने इसे मगध क्षेत्र की भाषा माना है किन्तु पालि का मागधी प्राकृत से भाषिक संरचनागत सम्बन्ध नहीं है, इस कारण यह मगध क्षेत्र की भाषा नहीं हो सकती।

संस्कृत के अघोष संघर्षी व्यंजन (ऊष्म) स् , श् , ष् में से मागधी में श् का तथा अर्द्धमागधी एवं शौरसेनी में स् का प्रयोग होता है। पालि में केवल स् का ही प्रयोग होता है। इस कारण पालि का आधार मागधी तो हो ही नहीं सकता। इसका मूल आधार अर्द्धमागधी एवं / अथवा शौरसेनी ही हो सकता है। इस सम्बंध में आगे विचार किया जाएगा। पहले संस्कृत से पालि के भेदक अन्तरों को जानना आवश्यक है। ये निम्न हैं –

1. संस्कृत तक ' ए ', ' ओ ', ऐ ', 'औ ' सन्ध्यक्षर थे अर्थात् अ + इ > ए / अ +उ > ओ / आ + इ > ऐ / आ + उ > औ। (सन्ध्यक्षर = दो स्वर मिलकर जब एक अक्षर का निर्माण करें) (दे० – डॉ० महावीर सरन जैन : परिनिष्ठित हिन्दी का ध्वनिग्रामिक अध्ययन पृ ० 175 – 182)। पालि में ऐ एवं औ के स्थान पर ए एवं ओ का प्रयोग होने लगा। ' अय् ' एवं ' अव् ' के स्थान पर भी ए एवं ओ का प्रयोग होने लगा। व्यंजन गुच्छ के पूर्व ए एवं ओ का ह्रस्व उच्चारण होने लगा। इस प्रकार पालि में ए एवं ओ के ह्रस्व एवं दीर्घ दोनों प्रकार के उच्चारण विकसित हो गए।

2. प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं में प्रयुक्त ऋ एवं ऌ का लोप हो गया।

3. व्यंजन गुच्छ में एक व्यंजन का लोप तथा अन्य व्यंजन का समीकरण पालि एवं प्राकृत भाषाओं का महत्वपूर्ण भेदक लक्षण है। कहीं पूर्व व्यंजन का लोप होकर बाद के व्यंजन का समीकरण तथा कहीं बाद के व्यंजन का लोप होकर पूर्व व्यंजन का समीकरण। दोनों प्रकार के उदाहरण देखें –

सप्त > सत्त / शब्द > सद्द / कर्क > कक्क / सर्व > सब्ब / निम्न > निन्न

लग्न > लग्ग / तक्र > तक्क / शुक्ल > सुक्क / शक्य > सक्क / अश्व > अस्स

4. शब्द–रूपों में व्यंजनान्त रूपों का अभाव हो गया । शब्द सस्वर बन गए।

5. द्विवचन का लोप हो गया। आगे भी इस वचन का प्रयोग होना बन्द हो गया।

6. पूर्व में प्रतिपादित किया जा चुका है कि वैदिक भाषा में रूप–रचना में अधिक विविधता और जटिलता है। उदाहरणार्थ, प्रथम विभक्ति के बहुवचन में देव शब्द के देवाः और देवासः दोनों रूप मिलते हैं। इसी तरह तृतीया के एकवचन मे देवैः और देवभिः दोनों रूप मिलते हैं। संस्कृत में आकर रूप अधिक व्यवस्थित हो गए और अपवादों तथा भेदों की कमी हो गयी। उदाहरणार्थ, पूर्वोक्त दोनों वैकल्पिक रूप छँट गए और एक–एक रूप (देवाः तथा देवैः) रह गए। मगर हम पाते हैं कि पालि में वैदिक भाषा के रूपों का प्रयोग मिलता है।

7. आत्मनेपद लुप्तप्राय है।

पालि का महत्व बौद्धमत की हीनयान शाखा के साहित्य के माध्यम के रूप मे बहुत अधिक है। अशोक के अभिलेखों का भी ऐतिहासिक महत्व निर्विवाद है। अशोक के अभिलेखों के अध्ययन से स्पष्ट ज्ञात होता है कि पालि में भी स्थान भेद से भेद हो गए थे। पाँच प्रकार के भेद दिखाई पड़ते हैं –पश्चिमी, उत्तर–पश्चिमी, मध्यदेशीय, पूर्वी और दक्षिणी । (दे० डॉ० सुकुमार सेन :

तुलनात्मक पालि – प्राकृत – अपभ्रंश व्याकरण, पृ० 16 – 21, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1969)

विद्वानों एवं शोधकों को इस काल की भाषा के स्वरूप, भाषा का नामकरण एवं भाषा के काल आदि के सम्बन्ध में नए ढंग से विचार करना चाहिए। इनके सम्बन्ध में पुनर्विचार आवश्यक है। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि 600 ईस्वी पूर्व से लेकर 500 ईस्वी पूर्व की काल अवधि में जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थंकर महावीर एवं बौद्ध धर्म के संस्थापक बुद्ध ने मगध, विदेह, वत्सदेश, कुणाल, अंगदेश, काशी, पांचाल, कोशल, शूरसेन, दशार्ण आदि राज्यों एवं जनपदों में चतुर्दिक घूम घूमकर उपदेश / प्रवचन दिए। उपर्युक्त वर्णित राज्य एवं जनपदों की भौगोलिक स्थिति वर्तमान में नेपाल देश का भूभाग तथा भारत के बिहार, झारखंड, उत्तरप्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ आदि राज्यों का भूभाग है। राजनैतिक दृष्टि से इस काल में दो प्रकार की शासन व्यवस्थायें थीं। मगध में राजतंत्रात्मक शासन व्यवस्था थी। मल्ल, लिच्छिवी, काशी, कोशल आदि 18 गणराज्यों ने मिलकर महासंघ बनाया था जो अपेक्षाकृत अधिक शक्तिशाली था तथा इस महासंघ का मुख्यालय ' वैशाली ' में स्थित था। इस महासंघ की सम्पर्क भाषा का अन्तर्राज्य व्यवहार के लिए प्रयोग होता होगा तथा भारत के बड़े भूभाग के निवासियों के नागरिक इसे समझते होंगे। इस कारण विद्वानों एवं शोधकों को इस काल की भाषा का काल 500 ई० पू० से न मानकर 600 ई० पू० से मानना चाहिए। भाषा का अभिधान ' पालि ' की अपेक्षा ' महावीर एवं बुद्ध के उपदेशों की भाषा ' करना चाहिए। दोनों ने एक ही काल में तथा एक से भूभागों में उपदेश/ प्रवचन दिए थे ; एक भाषा का व्यवहार किया था। (उदाहरणार्थ, दे० – भगवान महावीर की वाणी– ' अप्पा कत्ता विकत्ता य '। गौतम बुद्ध की वाणी – ' अत्ता ही अत्तनो नाथो ')। अभी तक इस काल की भाषा का अध्ययन केवल बुद्ध वचनों के आधार पर हुआ है; ' पालि ' के आधार पर हुआ है। विद्वानों को दोनों के उपदेशों की भाषा के गहन अध्ययन करते हुए तदनन्तर अशोक के शिलालेखों (260 ई० पू० से 232 ई० पू०) में प्राप्त भाषिक भिन्नताओं का गहन अध्ययन सम्पन्न करना चाहिए तथा यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि प्राप्त भाषिक भिन्नताएँ हिन्दी, बंगला, मराठी आदि भिन्न भिन्न भाषाओं की भाँति हैं अथवा हिन्दी, कलकतिया/ कोलकोतिया हिन्दी , बम्बइया/ मुंबइया हिन्दी की भाँति हैं।

(ख) द्वितीय प्राकृत (ई0 सन् के आरम्भ से 500 ई0 तक)– साहित्यिक प्राकृत –

प्राकृतें विभिन्न लोक–भाषाएँ थीं, वाचिक भाषाएँ थीं । आज उन्हें जानने का आधार उनका साहित्यिक रूप ही है। प्राकृतों की संख्या को लेकर पर्याप्त मतभेद हैं। परम्परागत दृष्टि से इनके

निम्नलिखित भेद माने जाते हैं: महाराष्ट्री (विदर्भ महाराष्ट्र) / शौरसेनी (सूरसेन– मथुरा के आस–पास) / मागधी (मगध) /अर्द्धमागधी (कोशल) /पैशाची (सिन्ध)।

वस्तुतः प्राकृतों की संख्या निर्धारित करना कठिन है क्योंकि वे विभिन्न जनपदों की लोक भाषाएँ थीं । इसलिए जितनी लोक–भाषाएँ रही होंगी, उतनी ही प्राकृतें भी मानना चाहिए । किन्तु इन लोक प्राकृतों को जानने का कोई साधन नहीं है। यों आभारी, आवन्ती, गौड़ी, ढक्की, शाबरी, चाण्डाली आदि अनेक नाम यत्र–तत्र पाये जाते हैं।प्राकृत भाषाओं का ज्ञान मुख्यतः संस्कृत नाटकों और जैन साहित्य पर आधारित है। विभिन्न विद्वानों ने इन प्राकृतों का अध्ययन किया हैं।

(देखें– R. Pischel's *Grammatik der Prakritsprachen* : Strasburg, 1900/ R. Pischel's *Grammar of the Prakrit Languages*: New York, Motilal Books, 1999/ H. Jacobi's *Ausgewahlte Erzahlungen in Mdhardshtri zur Einfiihrung in das Studium des Prakrit, Grammatik, Text, Worterbuch* : Leipzig, 1886/ E. B. Cowell's of Vararuci's *Prakrta-prakasa* : London, 1868/ E. Hultzsch's of S irhharaja's *Prakrtarupavatara* : London, 1909/ *Rajacekhara's Karpuramanjari*, edited by S. Konow, translated by C. R. Lanman : Cambridge, Mass., 1901 / Banerjee, Satya Ranjan. *The Eastern School of of Prakrit Grammarians - a linguistic study* :Calcutta, Vidyasagar Pustak Mandir, 1977/ Woolner, Alfred C. *Introduction to Prakrit*:Delhi, Motilal Banarsidass, India, 1999)

इनका सार निम्न है :

महाराष्ट्री–

काव्यों की भाषा महाराष्ट्री है । कुछ विद्वान महाराष्ट्री को शौरसेनी का ही विकसित रूप मानते हैं। (Dr. Man Mohan Ghosh : " Maharāṣṭrī : A late phase of Shaurasenī " Journal of the Department of Letters of Calcutta University, Vol. XXXII, 1933).

विशेषताएँ––

1. महाराष्ट्री प्राकृत की उल्लेखनीय विशेषता है– स्वर बहुलता। स्वर बाहुल्य होने के कारण काव्य में संगीतात्मकता का गुण आ जाता है।
2. दो स्वरों के मध्यवर्ती अल्पप्राण स्पर्श व्यंजन का लोप हो जाता है। लोको > लोओ/ रिपु > रिऊ
3. स्वर मध्य महाप्राण व्यंजनों का लोप होकर केवल ' ह् ' रह जाता है। मेघ > मेहो/ शाखा > शाहा
4. स्वर मध्य ऊष्म व्यंजनों –श् ष् स् – का ' ह् ' हो जाता है। दश > दह / पाषाण > पाहाण ।
5. अपादान एकवचन में – आहं विभक्ति प्रत्यय का प्रयोग अधिक होता है।
6. अधिकरण एकवचन के रूपों की सिद्धि – ए / – म्मि से होती है। उदाहरणार्थ संस्कृत के लोकस्मिन् के रूप – लोए / लोअम्मि मिलते हैं।

शौरसेनी–

शौरसैनी मध्यदेश की भाषा थी और उसका केन्द्र मथुरा के आस पास था।महाराष्ट्री का प्रयोग यदि पद्य में हुआ है तो शौरसेनी का गद्य में । इसका प्रयोग संस्कृत नाटकों में स्त्री पात्रों एवं विदूषक के सम्भाषणों में हुआ है।

विशेषताएँ–

1. शौरसेनी में दो स्वरों के मध्य संस्कृत के अघोष –त् एवं – थ् सघोष हो जाते हैं अर्थात् त् > द् और द् > ध् हो जाते हैं। भवति > होदि ।
2. क्ष > क्ख । चक्षु > चक्खु/ इक्षु > इक्खु/ कुक्षि > कुक्खि ।
3. 'य' प्रत्यय का 'ईअ' हो जाता है। यथा संस्कृत 'गम्यते' का रूप 'गमीअदि' हो जाता है।

मागधी –

जैसा नाम से स्पष्ट है, मागधी मगध की भाषा थी। नाटकों में इसका प्रयोग निम्न श्रेणी के पात्रों के सम्भाषणों के लिए किया गया है। महाराष्ट्री और शौरसेनी की तुलना में मागधी का प्रयोग बहुत कम हुआ है।

विशेषताएँ–

1. मागधी में '–र्' का अभाव है। 'र्' का 'ल्' हो जाता है। पुरुषः > पुलिशे /समर > शमल
2. 'स्' , 'ष्' के स्थान पर 'श्' का प्रयोग इसकी प्रधान विषेशता है। सप्त > शत्त
3. 'ज्' के स्थान पर 'य्' का प्रयोग होता है। जानाति > याणादि / जानपदे > यणपदे।
4. द्य् , र्ज् , र्य् के स्थान पर 'य्य्' का प्रयोग होता है। अद्य > अय्य/ अर्जुन > अय्युण / आर्य > अय्य / कार्य > कय्य
5. कर्ता कारक एकवचन में प्रायः ' अः ' के बदले ' ए ' पाया जाता है। सः > शे

अर्द्धमागधी–

अर्द्धमागधी की स्थिति मागधी और शौरसेनी प्राकृतों के बीच मानी गई है। इसलिए उसमें कुछ–कुछ दोनों की विशेषताएँ पायी जाती हैं।(दे० मार्कण्डेय – प्राकृत सर्वस्व,पृ० 12 –38) अर्द्धमागधी का महत्व जैन साहित्य के कारण अधिक है।

विशेषताएँ–

1. 'र्' एवं 'ल्' दोनों का प्रयोग होता है।
2. दन्त्य का मूर्धन्य हो जाना । स्थित > ठिप
3. श्, ष्, स् में केवल स् का प्रयोग होता है।

4. अनेक स्थानों पर स्पर्श व्यंजनों का लोप होने पर 'य' श्रुति का आगम हो जाता है। सागर > सायर / कृत > कयं । 'ग्' व्यंजन का सामान्यतः लोप नहीं होता।

5. कर्ता कारक एक वचन के रूपों की सिद्धि मागधी के समान एकारान्त तथा शौरसेनी के समान ओकारान्त दोनों प्रकार से होती है।

पैशाची–

पैशाची भारत के उत्तर पश्चिम में बोली जाती थी । गुणाढ्य ने पैशाची में अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'वृहत्कथा'(बड्डकहा) लिखी थी, जिसकी उत्तरवर्ती कवियों ने मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। अब इसका पैशाची पाठ उपलब्ध नहीं है। प्राकृत के वैयाकरणों ने पैशाची की प्रमुख विषेशताएँ निम्न बतलाई हैं :

1. सघोष व्यंजन का अघोषीकरण। गगन > गकन / राजा > राचा / मदन > मतन ।
2. स्वर मध्य क्, ग्, च् आदि स्पर्श व्यंजनों का लोप न होना।
3. र् एवं ल् व्यंजनो का विपर्यास होना।अर्थात् र् के स्थान पर ल् और ल् के स्थान पर र् होना। कुमार > कुमाल / रुधिर > लुधिर ।
4. ष् के स्थान पर कहीं श् तथा कहीं स् का होना। तिष्ठति > चिश्तदि / विषम > विसम ।
5. ज्ञ > ञ्ञ । प्रज्ञा > पञ्ञा ।

लेखक ने अन्यत्र विस्तार से स्पष्ट किया है कि 'प्राकृत काल' में भाषा भेद आज की अपेक्षा बहुत अधिक रहे होंगे मगर उपलब्ध जिन प्राकृतों को भिन्न देश भाषाओं से अभिहित किया जाता है वे अलग अलग भाषाएँ न होकर एक ही प्राकृत भाषा के तत्कालीन देश भाषाओं से रंजित रूप हैं।(दे० Dr. *Mahavir Saran Jain :* "The Influences of the `Prakrit` and `Apabhransha` Languages on the Modern Indo-Aryan Languages" In Jaina : Philosophy, Art and Science in Indian Culture (Set in 2.Volumes) edited by D.C. Jain and R.K. Sharma. - www. *sundeepbooks.com/servlet/sugetbiblio?bno=000302)*

(ग) तृतीय प्राकृत (500 ई0 से 1000 ई0 तक)– अपभ्रंश–

अपभ्रंश शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम महाभाष्य में मिलता है। उसके बाद भामह, दण्डी आदि ने काव्य भाषाओं की चर्चा के प्रसंग में अपभ्रंश का उल्लेख किया है। मार्कण्डेय ने नागर, ब्राचड और उपनागर– तीन अपभ्रंशों की चर्चा की है। इनमें नागर की गुजरात में, ब्राचड की सिन्ध में और उपनागर की दोनों के बीच में स्थिति बतायी गयी है। स्पष्ट है कि मार्कण्डेय ने केवल पश्चिम के सीमित भू–भाग के अपभ्रंशों की ही चर्चा की है। उनके समानान्तर भारत के अन्य भागों में भी किसी न किसी अपभ्रंश का व्यवहार होता होगा, इसमें सन्देह नहीं । इस काल में भी हमें दोनों स्थितियाँ मिलती हैं। एक तरफ सम्पर्क भाषा के रूप में शौरसेनी अपभ्रंश का व्यवहार होता था तो दूसरी तरफ भिन्न भिन्न देश अपभ्रंशों का चलन था। शौरसेनी की अन्तर्राजीय व्यवहार की स्थिति

के बारे में डॉ० बाबूराम सक्सेना के विचार हैं : ' यही (शौरसेनी अपभ्रंश) भारतवर्ष भर में – क्या मध्यदेश, क्या मगध और मिथिला और क्या गुजरात और महाराष्ट्र सब कहीं – साहित्य का माध्यम बना हुआ था और जनता के परस्पर अंतः प्रान्तीय व्यवहार का साधन था ' (मध्यदेश का भाषा विकास, पृ० 25 – नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष 50, अंक 1 – 2 सं० 2002 (सन् 1945))। अपभ्रंश के भेदों की दृष्टि से मार्कण्डेय ने 'प्राकृत सर्वस्व' में सूक्ष्म भेद व्यवस्थित प्रकरण के अन्तर्गत अपभ्रंश के जिन 27 भेदों का नामोल्लेख किया है, उनसे अपभ्रंश के भेदों के सम्बन्ध में संकेत मिलता है। (1. ब्राचड 2. लाट 3. वैदर्भ 4. उपनागर 5. नागर 6. वर्वर 7. आवन्त्य 8. पंचाल 9. टक 10. मालव 11. कैकय 12. गौड 13. औड्र 14. हैव 15. पाश्चात्थ 16. पाण्ड्य 17 .कुन्तल 18. सेंहली 19. कलिंग 20. प्राच्य 21.कर्नाट 22. कांच्य 23. द्रविड 24. गौर्जर 25. > शमल आभीर 26. मध्यदेशीय 27. वैताल)

इन 27 नामों का उल्लेख करने के बाद भी मार्कण्डेय को संतोष नहीं हुआ। उन्होंने आगे कहा कि विभाषा के भेदों की दृष्टि से तो अपभ्रंश के हज़ारों भेद किए जा सकते हैं।

इन विभिन्न अपभ्रंशों से ही आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का उद्भव हुआ है। इस प्रकार से अपभ्रंश प्राकृतों और आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच की संयोजक कड़ी है।

अपभ्रंश की विशेषताएँ–

1. अपभ्रंश तक पहुँचते पहुँचते संस्कृत की योगात्मकता के नियमों के टूटने के निशान दिखाई देने लगते हैं। डॉ० हीरालाल जैन ने संस्कृत की योगात्मकता से हिन्दी की अयोगात्मकता की विकास यात्रा को एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार स्पष्ट किया है : ' इस प्रकार 'रामः गतः वन्' (संस्कृत) से 'रामो गओ वणं' (प्राकृत) बनकर अपभ्रंश में 'रामु गयउ वणु' और हिन्दी में 'राम गया वन' गया। (डॉ० हीरालाल जैन : रचना और पुनर्रचना, पृ० 40 – 41, डॉ० भीमराव अम्बेदकर विश्वविद्यालय, आगरा, नवम्बर, 2002)
2. प्राकृत की ध्वनियाँ अपभ्रंश में भी सुरक्षित हैं।
3. द्वित्व व्यंजनों में से एक का लोप और पूर्ववर्ती अक्षर में क्षतिपूरक दीर्घीकरण हो जाता है। सं0 तस्य> प्रा0 तस्स > अ0 तासु
4. अपभ्रंश में केवल तीन कारक – समूह रह गए – (1) कर्ता – कर्म – सम्बोधन (2) करण – अधिकरण (3) सम्प्रदान एवं सम्बंध में पहले एकरूपता आई। बाद में अपादान का भी इसमें समावेश हो गया। इस प्रकार क्रिया के काल–रूपों में जो विविधता थी, वह बहुत कम हो गयी।
5. कारकीय अर्थ को स्पष्ट करने के लिए विभक्तियुक्त पद के बाद परसर्ग जैसे शब्दों का प्रयोग होने लगा। सम्बंध कारक के लिए – केर, केरअ, केरी, तणिउ ; अधिकरण कारक के लिए – मांझ, मज्झि, उप्परि ; सम्प्रदान कारक के लिए – केहिं, तण तथा अपादान कारक के लिए – होन्तउ का अधिक प्रयोग हुआ है।
6. क्रिया की रचना कृदन्त रूपों से भी होने लगी। काल रचना की जटिलता कम हो गयी ।

7. सर्वनामों के रूपों में परिवर्तन हो गया। उदाहरण के लिए उत्तम पु० ए० व०कर्ता का० के लिए – हउं का प्रयोग अधिक हुआ है।

8. अपभ्रंश में देशी धातुओं एवं शब्दानुकरण मूलक धातुओं का प्रयोग भी मिलता है।

9. अपभ्रंश में देशी शब्दावली के साथ साथ आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के उद्‌गम सूचक शब्दों एवं मुहावरों का भी प्रयोग मिलता है।

10. वर्तमान कालिक कृदन्तों के उदाहरणों में पुल्लिंग – डज्झंत, सिंचंत, करंत तथा स्त्रीलिंग – उत्तारंति द्रष्टव्य हैं।

11. भूतकालिक रचना कृदन्तों से ही अधिक होती है। उदाहरण – अक्खिय, अवलोइय, कहिय, गालिअ, भक्खिअ।

12. क्रियाओं में आत्मनेपद, परस्मैपद एवं भ्वादि आदि का कोई भेद नहीं रहा। द्विवचन का तो पालि में ही लोप हो गया था। द्विवचन का बोध कराने के लिए 'वे' , 'वि' शब्दों का प्रयोग मिलता है।

(ग) आधुनिक भारतीय आर्य–भाषा

आधुनिक भारतीय आर्य–भाषाओं का विकास अपभ्रंश से हुआ है। इस सम्बन्ध में लेखक ने 'अपभ्रंश से हिन्दी' तथा 'प्राकृत एवं अपभ्रंश का आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं पर प्रभाव' शीर्षक आलेखों में विस्तार से विचार किया है।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की सामान्य विशेषताएँ–

1. आधुनिक भारतीय आर्य–भाषाएँ लगभग पूर्णतः अयोगात्मक हो गई हैं।
2. ध्वनियों में अनेक परिवर्तन हो गये हैं, फिर भी लिपि में परम्परा का पालन किया जा रहा है। उदाहरणार्थ, ष् का संस्कृत के समान मूर्द्धन्य स्थान से उच्चारण नहीं होता किन्तु लिखने में प्रयोग होता है। ॲ, क़, ख़, ग़, ज़, फ़ अनेक विदेशी ध्वनियों का भी भाषाओं में प्रवेश हो गया है। इनका प्रयोग शिक्षित वर्ग विशेष के द्वारा होता है। इनका आधुनिक भाषाओं में स्वनिमिक महत्व के मुद्‌दे पर विद्वानों में मतभेद है।
3. अपभ्रंश के समान द्वित्व व्यंजन के स्थान पर एक का लोप और पूर्ववर्ती अक्षर की दीर्घता यहां भी पायी जाती है। उदाहरणार्थ : कर्म > कम्म > काम /निद्रा > णिद्‌दा > नींद/ सप्तं >सत्त > सात / अद्य > अज्ज > आज
4. अपभ्रंश की अपेक्षा भा0आ0भा0 में विभक्ति रूपों की संख्या में कमी आ गई है। कारकीय अर्थ के लिए संज्ञा विभक्तिरूपों के बाद परसर्गीय शब्द/ शब्दांशों का प्रयोग होता है। संज्ञा विभक्ति शब्दों के प्राय दो रूप पाये जाते हैं – अविकारी एवं विकारी ।
5. केवल मराठी और गुजराती में तीन लिंग हैं । शेष भाषाओं में दो ही लिंग हैं।

6. आधुनिक भारतीय आर्यभाषा काल की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि अंग्रेजी, अरबी और फारसी के बहुत सारे शब्द भारतीय भाषाओं में प्रविष्ट हो गये हैं। अपभ्रंश–काल तक शब्द भण्डार देशी था।

अपभ्रंश से आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का विकास परम्परा से निम्नलिखित रूप में माना जाता है –

मागधी > बिहारी हिन्दी (मैथिली, मागधी, भोजपुरी) / बंगला, उड़िया, असमिया

अर्द्धमागधी > पूर्वी हिन्दी (अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी)

शौरसेनी > पश्चिमी हिन्दी (ब्रजभाषा, खड़ी बोली, बांगरू, कन्नौजी, बुंदेली) / राजस्थानी हिन्दी (मेवाती, मारवाड़ी, मालवी, जयपुरी) / गुजराती

महाराष्ट्री > मराठी, कोंकणी

शौरसेनी प्रभावित टाक्की > पूर्वी पंजाबी

व्राचड़ > सिन्धी

पैशाची > काश्मीरी

उपर्युक्त विवरण पूर्ण एवं वैज्ञानिक नहीं है। जो विवरण प्रस्तुत हैं वे अपभ्रंश काल के लिखित साहित्यिक भाषा रूप से आधुनिक काल के बोले जाने वाले विभिन्न भाषिक रूपों के विकास के अतार्किक प्रयास हैं। संक्षेप में हम यह दोहराना चाहेंगे कि ' भारतीय आर्य भाषाओं के क्षेत्र ' में अपभ्रंश काल में भी विविध बोलचाल के रूपों का व्यवहार होता होगा।अपभ्रंश काल के इन्हीं विविध बोलचाल के रूपों से आधुनिक भारतीय भाषाओं के विविध बोलचाल के रूपों का उद्‌भव हुआ मगर अपभ्रंश काल के विविध बोलचाल के रूपों से सम्बन्धित सामग्री हमें आज उपलब्ध नहीं है।भाषाविज्ञान का प्रत्येक विद्‌यार्थी जानता है कि प्रत्येक 'भाषा क्षेत्र' में अनेक क्षेत्रगत भिन्नताएँ होती हैं जिन्हें उस भाषा की क्षेत्रीय बोलियों / क्षेत्रीय उपभाषाओं के नाम से जाना जाता है। इतना ज्ञान तो सामान्य व्यक्ति को भी होता है कि 'चार कोस पर बदले पानी, आठ कोस पर बानी'। भाषाविज्ञान का प्रत्येक विद्‌यार्थी यह भी जानता है कि प्रत्येक 'भाषा क्षेत्र' में एक मानक भाषा रूप भी होता है जिसका उस भाषा क्षेत्र के सभी शिक्षित व्यक्ति औपचारिक अवसरों पर प्रयोग करते हैं तथा यही मानक भाषा रूप लिखित भाषा का आधार होता है तथा यही मानक रूप उस भाषा की 'साहित्यिक भाषा' का भी आधार होता है।(देखें – प्रोफेसर महावीर सरन जैन : भाषा एवं भाषाविज्ञान, पृष्ठ 54 – 70, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1985)

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण

डा0 सर जार्ज ग्रियर्सन ने आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का वर्गीकरण डा0 हार्नले के सिद्धान्त का समर्थन करते हुए (देखें –प्रोफेसर महावीर सरन जैन का आलेख:

विदेशी विद्वानों द्वारा हिन्दी का अध्ययन http://rachanakar.blogspot.com) **निम्न प्रकार से किया है –**

(क) बाहरी उपशाखा

(अ) उत्तरी–पश्चिमी समुदाय

(1) लहँदा अथवा पश्चिमी पंजाबी

(2) सिन्धी

(आ) दक्षिणी–समुदाय

(3) मराठी

(इ) पूर्वी समुदाय

(4) उड़िया

(5) बिहारी

(6) बंगला

(7) असमिया

(ख) मध्य उपशाखा

(ई) बीच का समुदाय

(8) पूर्वी–हिन्दी

(ग) भीतरी उपशाखा

(उ) केन्द्रीय अथवा भीतरी समुदाय

(9) पश्चिमी हिन्दी

(10) पंजाबी

(11) गुजराती

(12) भीली

(13) खानदेशी

(14) राजस्थानी

(ऊ) पहाड़ी समुदाय

(15) पूर्वी पहाड़ी अथवा नैपाली

(16) मध्य या केन्द्रीय पहाड़ी

(17) पश्चिमी–पहाड़ी

डा0 ग्रियर्सन का यह विभाजन अब मान्य नही है। प्रसिद्ध भाषाशास्त्री डा0 सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने डा0 ग्रियर्सन के इस मत की आलोचना अपनी पुस्तक 'ओरिजिन एण्ड डेवलपमेण्ट

ऑफ बेंगाली लैंग्वेज़' के परिशिष्ट 'ए' के पृष्ठ 150 से 156 में की है। उन्होनें ध्वनि–विचार एवं पद–विचार दोनों ही दृष्टियों से इस वर्गीकरण से असहमति प्रगट की है। यहाँ दोनों विद्वानों के मतों और डा0 सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या द्वारा डा0 ग्रियर्सन के विभाजन की आलोचनाओं को देना अप्रासंगिक है। नीचे डा0 चाटुर्ज्या का वर्गीकरण दिया जा रहा है। ऐतिहासिक विकास क्रम की दृष्टि से यह वर्गीकरण अपेक्षाकृत अधिक मान्य है।

डा0 सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या का वर्गीकरणः

(क) उदीच्य (उत्तरी)

(1) सिन्धी

(2) लहँदा

(3) पूर्वी–पंजाबी

(ख) प्रतीच्य (पश्चिमी)

(4) गुजराती

(5) राजस्थानी

(ग) मध्यदेशीय

(6) पश्चिमी हिन्दी

(घ) प्राच्य (पूर्वी)

(7) (अ) कोसली या पूर्वी हिन्दी

(आ) मागधी प्रसूत

(8) बिहारी

(9) उड़िया

(10) बंगला

(11) असमी

(ङ) दक्षिणात्य

(12) मराठी

डा0 सुनीति कुमार चटर्जी का वर्गीकरण डा0 ग्रियर्सन के वर्गीकरण की अपेक्षा संगत है।

भारतीय आर्य भाषाओं के आधुनिक स्वरूप के परिप्रेक्ष्य में एककालिक दृष्टि से इस वर्गीकरण में भी संशोधन अपेक्षित है। डा0 सुनीति कुमार चटर्जी के वर्गीकरण में हिन्दी भाषा का

भौगोलिक विस्तार सम्यक् रूप में नहीं दिखाया गया है। मध्य देशीय के अन्तर्गत केवल पश्चिमी हिन्दी को रखा गया है। हिन्दी भाषा – क्षेत्र के विस्तार की स्वीकृति एवं मान्यता को ध्यान में रखते हुए डा0 धीरेन्द्र वर्मा ने आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का वर्गीकरण इस प्रकार प्रस्तुत किया है:

(क)– उदीच्य (उत्तरी)
1– सिंधी
2– लहँदा
3– पंजाबी
(ख)– प्रतीच्य (पश्चिमी)
4– गुजराती
(ग)– मध्यदेशीय (बीच का)
5– राजस्थानी
6– पश्चिमी हिंदी
7– पूर्वी हिंदी
8– बिहारी
9– पहाड़ी
(घ)– प्राच्य (पूर्वी)
10– उड़िया
11– बंगाली
12– असमी
(ड़) दक्षिणात्य (दक्षिणी)
13– मराठी

पहाड़ी भाषाओं का मूलाधार चैटर्जी महोदय पैशाची, दरद या खस को मानते हैं। बाद को मध्यकाल में ये राजस्थान की प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं से बहुत अधिक प्रभावित हो गई थीं (डा0 धीरेन्द्र वर्मा : हिन्दी भाषा का इतिहास, पृष्ठ 53)। उपर्युक्त भाषाओं के अतिरिक्त कई अन्य भाषाएँ भी आधुनिक आर्यभाषाओं के अन्तर्गत परिगणित हैं। भारत के बाहर श्रीलंका की सिंहली एवं मालद्वीप की दिवेही तथा भारत की 1991 की जनगणना के संदर्भ को ध्यान में रखते हुए डा0 धीरेन्द्र वर्मा द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण में किंचित संशोधन/परिवर्द्धन करते हुए आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण निम्न प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:

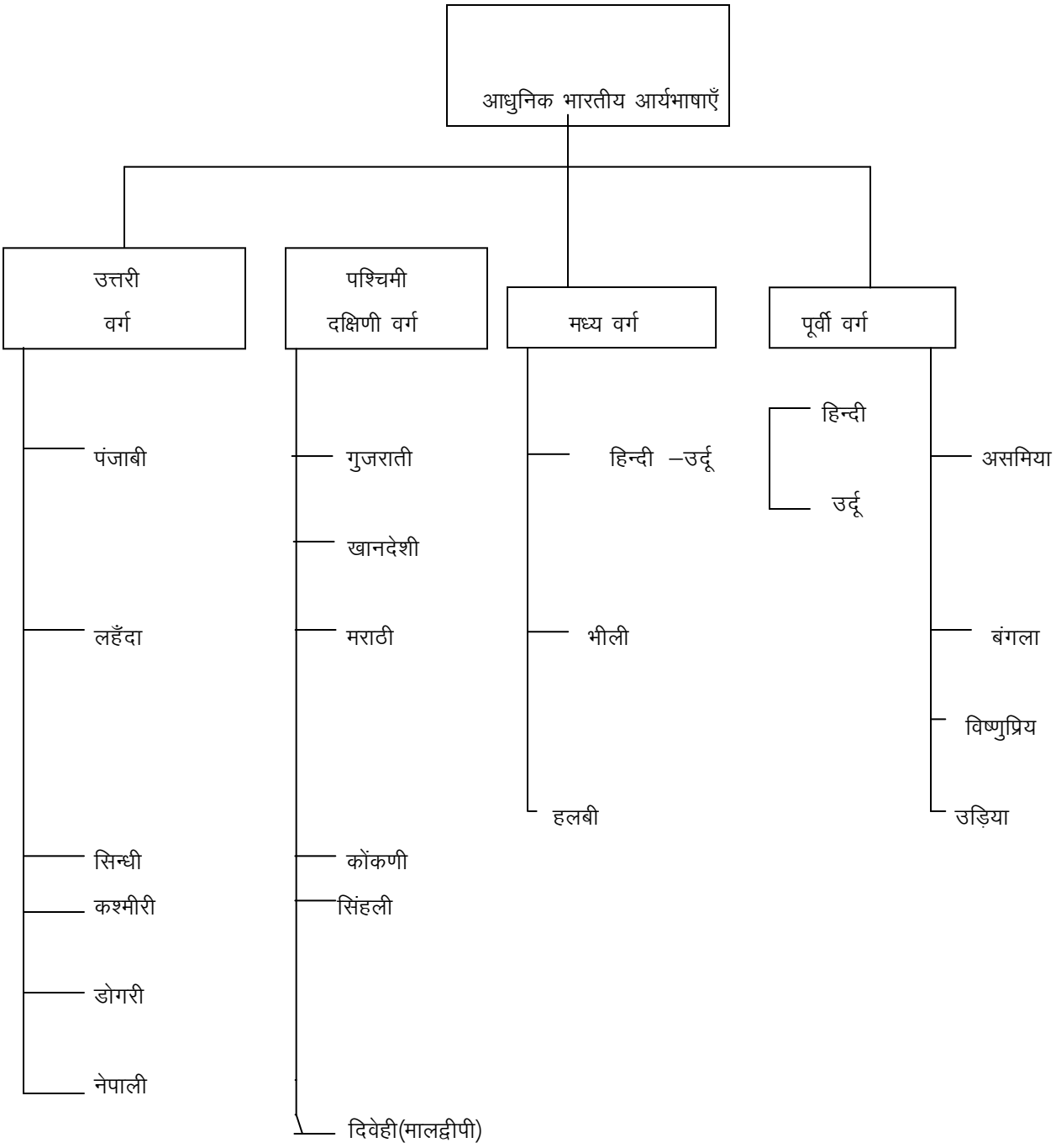

भारतीय आर्य भाषाओं में संस्कृत प्राचीन भारतीय आर्य भाषा काल की भाषा है। आज भी संस्कृत का धार्मिक एवं सांस्कृतिक कृत्यों में प्रयोग होता है। विश्व की सर्वोन्नत एवं श्रेष्ठतम

भाषाओं में अग्रणी स्थान पाने वाली संस्कृत भाषा का विशिष्ट महत्व है। इसी कारण इसको परिगणित भाषाओं में स्थान दिया गया है। संस्कृत के अलावा 14 आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ परिगणित सूची के अन्तर्गत आती हैं। आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में 20 भाषायें प्रमुख हैं। आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के बोलने वालों का प्रतिशत भारत की जनसंख्या में 75.30% है।

उपर्युक्त तालिका में हिन्दी एवं उर्दू को कोष्ठक में इस कारण रखा गया है क्योंकि भाषिक दृष्टि से दोनों में भेद नहीं है। (देखें – प्रोफेसर महावीर सरन जैन : हिन्दी – उर्दू का अद्वैत, संस्कृति (अर्द्ध वार्षिक पत्रिका) पृष्ठ 21 – 30, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2007)। इसी प्रकार तालिका में 'मैथिली' को इस कारण नहीं दिखाया गया है क्योंकि लेखक ने अन्यत्र स्पष्ट किया है कि खड़ी बोली के आधार पर मानक हिन्दी का विकास अवश्य हुआ है किन्तु खड़ी बोली ही हिन्दी नहीं है। 'हिन्दी भाषा क्षेत्र' के अन्तर्गत जितने भाषिक रूप बोले जाते हैं उन सबकी समष्टि का नाम हिन्दी है। (देखें – प्रोफेसर महावीर सरन जैन : संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषाएँ एवं हिन्दी, गगनांचल, पृष्ठ 43 – 46, वर्ष 28, अंक 4, भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद्, नई दिल्ली, अक्टूबर – दिसम्बर, 2005)

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का विवरण :

(क) परिगणित –

क्र0 सं0	भाषा का नाम	भाषा के बोलने वालों की संख्या	राज्य / राज्यों के नाम
1.	असमिया	13,079,696	असम
2.	बंगला	69,595,738	पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा
3	डोगरी	00,089,681	जम्मू–कश्मीर
4	गुजराती	40,673,814	गुजरात
5	हिन्दी	337,272,114	हरियाणा, उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार, झारखण्ड, दिल्ली, चंडीगढ़
6	कश्मीरी	विवरण अनुपलब्ध	जम्मू–कश्मीर
7	कोंकणी	01,760,607	गोवा
8	मैथिली	07,766,597	बिहार
9	मराठी	62,481,681	महाराष्ट्र, गोवा
10	नेपाली	02,076,645	सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश
11	उड़िया	28,061,313	उड़ीसा

12	पंजाबी	23,378,744	पंजाब
13	सिन्धी	02,122,848	–
14	उर्दू	43,406,932	–
15	संस्कृत	00,049,736	–
(ख) अपरिगणित			
16	भीली	5,572,308	राजस्थान, मध्य प्रदेश
17	विष्णुप्रिया	0,059,233	असम
18	हलबी	0,534,313	मध्यप्रदेश
19	खानदेशी	0,973,709	महाराष्ट्र, गुजरात
20	लहँदा	0,027,386	–
21	अंग्रेजी(भारोपीय परिवार की जर्मेनिक उप परिवार की भाषा)	0,178,598	–

Ⅱ. द्रविड़ परिवार –

द्रविड़ शब्द की सार्थकता तथा इस मान्यता कि आर्य परिवार की भाषाएँ उत्तर भारत में एवं द्रविड़ परिवार की भाषाएँ दक्षिण भारत में बोली जाती हैं– के सम्बन्ध में पुनर –विचार आवश्यक है। पादरी राबर्ट ए. काल्डबेल ने इस परिवार की सभी भाषाओं को 'द्रविड़' नाम से पुकारा और यह नाम प्रचलित हो गया। 'द्रविड़' शब्द मूलतः क्षेत्र का वाचक है , भाषाओं का वाचक नहीं है। इस परिवार की ब्राहुई, माल्तो, कुरुख/ओरॉव दक्षिण भारत में नहीं बोली जाती। ब्राहुई तो पाकिस्तान–अफगानिस्तान के सीमान्त क्षेत्र में बोली जाती है। इसी प्रकार श्रीलंका की सिंहली भाषा आर्य परिवार की भाषा है। इसी कारण लोक प्रचलित धारणा एवं मान्यता संगत नहीं है।

द्रविड़ भाषाओं के बोलने वालों का प्रतिशत भारत की जनसंख्या का 22.53 % है। द्रविड़ परिवार की मातृभाषाओं में 17 भाषाएँ प्रमुख हैं। इनमें तमिल, तेलुगु, मलयालम एवं कन्नड़ परिगणित भाषाएँ हैं, शेष 13 भाषाएँ अपरिगणित हैं। द्रविड़ परिवार की भाषाओं को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है।

द्रविड़ परिवार की भाषाएँ

1	2	3	4
दक्षिणी	दक्षिण–मध्य	मध्य	उत्तर एवं पूर्व
मलयालम तमिल कन्नड़	तेलुगु जातपु कोलामी	गोंडी खोंड / कोंध किसन	कुरुख/ ओरांव माल्तो

कूरगी/कोडगु तुलु	कोंडा कोया	कुइ पारजी	

(क) परिगणित –

क्र0 सं0	भाषा का नाम	भाषा के बोलने वालों की संख्या	राज्य / राज्यों के नाम
22	कन्नड़	32,753,676	कर्नाटक
23	मलयालम	30,377,176	केरल
24	तमिल	53,006,368	तमिलनाडु
25	तेलुगु	66,017,615	आन्ध्र प्रदेश
(ख) अपरिगणित			
26	कूरगी/कोडगू	97,011	कर्नाटक
27	गोंडी	2,124,852	मध्य प्रदेश
28	जातपु	25,730	आन्ध्र प्रदेश
29	खोंड / कोंध	220,783	उड़ीसा, आन्ध्र प्रदेश
30	किसन	162,088	उड़ीसा
31	कोलामी	98,281	महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश
32	कोंडा	17,864	आन्ध्र प्रदेश
33	कोया	270,994	आन्ध्र प्रदेश
34	कुइ	641,662	उड़ीसा
35	कुरुख/ओरांव	1,426,618	झारखण्ड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल
36	माल्तो	108,148	झारखण्ड
37	पारजी	44,001	छत्तीसगढ़, उड़ीसा
38	तुलु	1,552,259	कर्नाटक

III. आग्नेय परिवार (आस्ट्रो–एशियाटिक)

भारत में इस परिवार की तीन शाखाओं की भाषाएँ बोली जाती हैं। खासी शाखा की प्रमुख भाषा 'खासी' मेघालय में खासी जनजाति तथा जयन्तिया पर्वतीय क्षेत्र में रहने वाले लोगों के द्वारा बोली जाती है। निकोबारी शाखा की मातृभाषाएँ (भाषा का नाम– निकोबारी) निकोबार द्वीप समूह के जनजाति के लोगों के द्वारा बोली जाती है। इस परिवार की तीसरी शाखा की भाषाएँ पश्चिम बंगाल, झारखण्ड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, उत्तराखण्ड एवं तमिलनाडु के जनजाति के लोगों के द्वारा बोली जाती हैं। इस शाखा की संथाली परिगणित सूची की भाषा है। इस परिवार की सभी भाषाओं के बोलने वालों की संख्या का प्रतिशत भारत की जनसंख्या में एक प्रतिशत से कुछ अधिक (1.13%) है।

(क) परिगणित –

क्र0 सं0	भाषा का नाम	भाषा के बोलने वालों की संख्या	राज्य / राज्यों के नाम
39	संथाली	8,216,325	झारखण्ड, बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल
(ख)	अपरिगणित		
40	भूमिज	45,302	उड़ीसा
41	गदबा	28,158	उड़ीसा, आन्ध्र प्रदेश
42	हो	949,216	बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा
43	जुआड.	16,858	उड़ीसा
44	खड़िया	225,556	झारखण्ड
45	खासी	912,283	मेघालय
46	कोडा/ कोरा	28,200	पश्चिम बंगाल
47	कोरकु / कुर्कू	466,073	मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र
48	कोरवा	27,485	छत्तीसगढ़
49	मुंडा	413,894	उड़ीसा, असम, पश्चिम बंगाल
50	मुंडारी	861,378	बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा
51	निकोबारी	26,261	अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह
52	सवर	273,168	उड़ीसा

IV. तिब्बत बर्मी –

इस परिवार की मातृभाषाओं की संख्या 226 है। भाषाओं की संख्या 48 है। भारत में तिब्बत बर्मी उपपरिवार की दो प्रमुख शाखाये हैं – 1. तिब्बती – हिमालयी, 2. बर्मी – असमिया। इस परिवार की सभी भाषाओं के बोलने वालों की संख्या का प्रतिशत भारत की जनसंख्या में एक प्रतिशत से भी कम है (0.97%) । इस परिवार की भाषाओं के अन्तर – सम्बन्धों की वास्तविकता को समझना बहुत कठिन है। इस परिवार की भाषाएँ पर्वतीय क्षेत्रों में बोली जाती हैं। इन पर्वतीय क्षेत्रों में परस्पर आवागमन एवं सामाजिक सम्पर्क में बाधा होती है। भाषाओं की विपुल संख्या का यह प्रधान कारण है। इस परिवार की प्रमुख भाषाओं को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता हैः

क. तिब्बती–हिमालयी

अ. तिब्बती – 1. तिब्बती 2. लद्दाखी 3. दां जोंगका 4. भोटी/ भुटिया 5. मोनपा

आ. हिमालयी – 1. लिम्बु, 2. लाहुली 3. कनौरी 4. लेप्चा / रोंग

ख. बर्मी – असमिया

अ. बोदो वर्ग –

1. कोछ 2. गारो 3. त्रिपुरी / तिपुरी 4. दिमासा 5. देउरी 6. बोडो 7. मिकिर / कार्बी 8. राभा 9. लालुड.

आ. नाग वर्ग –

1. अंगामी 2. आओ 3. काबुई 4. रेड.मा 5. कोन्यक 6. खियमड.न 6. चाँग 7. चखेसाड. 8. जेलियांग 9. तांगखुल 10. ताड.सा / लुड.चाड. 11. नोक्ते 12. फोम 13. माओ 14. यिमचुड.र 15. लोथा 16. वाड.चो 17. साड.तम 18. सेमा

इ. कुकी–चिन वर्ग –

1. कुकी 2. थाडो 3. पाइते 4. मणिपुरी 5. मिजो/लुशाई 6. लखेर/भरा 7. वाइफे 8. ह्मार 9. पवि 10. हलम 11. एनाल

ई. बर्मी वर्ग –

1. मोघ

उ. मिरि/मिशिड. वर्ग –

1. आदि 2. निशी / दफ़ला 3. मिरी / मिशिड.

(क) परिगणित –

क्र0 सं0	भाषा का नाम	भाषा के बोलने वालों की संख्या	राज्य / राज्यों के नाम
53	बोडो	1,221,881	असम, पश्चिम बंगाल
54	मणिपुरी	1,270,216	मणिपुर
(ख)	अपरिगणित		
55	आदि	158,409	अरुणाचल प्रदेश
56	एनाल	12,156	मणिपुर
57	अंगामी	97,631	नागालैंड
58	आओ	172,449	अनाल
59	भुटिया / भोटी	55,483	सिक्किम, हिमाचल प्रदेश
60	चखेसाड.	30,985	नागालैंड
61	छकरु /छोकरी	48,207	नागालैंड
62	चाँग	32,478	नागालैंड
63	देउरी	17,901	असम
64	दिमासा	88,543	असम
65	गाड.ते	13,695	मणिपुर
66	गारो	675,642	मेघालय, असम

67	हलम	29,322	त्रिपुरा
68	ह्मार	65,204	मणिपुर, असम
69	काबुई/ रोड.मय	68,925	मणिपुर
70	कार्बी / मिकिर	366,229	असम
71	खेज़ा	13,004	नागालैंड, मणिपुर
72	खियमड.न	23,544	नागालैंड
73	किन्नौरी	61,794	हिमाचल प्रदेश
74	कोछ	26,179	मेघालय, असम
75	कोम	13,548	मणिपुर
76	कोन्यक	137,722	नागालैंड
77	कुकी	58,263	मणिपुर, असम, नागालैंड
78	लाहुली	22,027	हिमाचल प्रदेश
79	लखेर / भरा	22,947	मिजोरम
80	लद्दाखी	पूर्ण विवरण अनुपलब्ध	जम्मू और कश्मीर
81	लालुड.	33,746	असम
82	लेप्चा	39,342	सिक्किम, पश्चिम बंगाल
83	लियाँगमाई	27,478	मणिपुर
84	लिम्बु	28,174	सिक्किम
85	लोथा	85,802	नागालैंड
86	लुशाई / मिजो	538,842	मिजोरम
87	माओ	77,810	मणिपुर
88	मराम	10,144	मणिपुर
89	मरिड.	15,268	मणिपुर
90	मिरी / मिशिड.	390,583	असम
91	मिसमी	29,000	अरुणाचल प्रदेश
92	मोघ	28,135	त्रिपुरा
93	मोनपा	43,226	अरुणाचल प्रदेश
94	निशी / दफ़ला	173,791	अरुणाचल प्रदेश
95	नोक्ते	30,441	अरुणाचल प्रदेश
96	पाइते	49,237	मणिपुर
97	पवि	15,346	मिजोरम
98	फोम	65,350	नागालैंड
99	पोचुरी	11,231	नागालैंड

100	राभा	139,365	असम
101	रेड.मा	37,521	नागालैंड
102	साड.तम	47,461	नागालैंड
103	सेमा	166,157	नागालैंड
104	शेरपा	16,105	सिक्किम
105	ताँग खुल	101,841	मणिपुर
106	ताँड.सा	28,121	अरुणाचल प्रदेश
107	थाडो	107,992	मणिपुर
108	तिब्बती	69,416	
109	त्रिपुरी	694,940	त्रिपुरा
110	वाइफ़े	26,185	मणिपुर
111	वाड.चो	39,600	अरुणाचल प्रदेश
112	यिमचुड.र	47,227	नागालैंड
113	जेलियाड.	35,079	नागालैंड
114	ज़ेमि	22,634	असम, मणिपुर, नागालैंड
115	ज़ोउ	15,966	मणिपुर

V. सामी परिवार

116	अरबी	21,975	

भारत की भाषाओं की समानता एवं एकता के सम्बन्ध में आगे विचार किया जा रहा है ।

भारत की भाषाओं की समानता एवं एकता :

भारत में एक अपेक्षा से अद्‌भुत सामाजिक सांस्कृतिक विविधतायें हैं, दूसरी अपेक्षा से विविधताओं के बीच एकता की अनुपम सामर्थ्य एवं शक्ति है। भारतीय संस्कृति के लिए 'अनेकता में एकता' जैसा विशेषण अकारण नहीं है। इसी कारण भारतीय संस्कृति के सम्बन्ध में टिप्पण है कि भारतीय संस्कृति महासमुद्र के समान है जिसमें अनेक नदियाँ आ–आकर विलीन होती रही हैं। इसी कारण दिनकर ने लिखा कि ''यह विश्वजनीनता, विभिन्न जातियों को एक महाजाति के सांचे में ढालने का यह अद्‌भुत प्रयास और अनेक वादों, विचारों और धर्मों के बीच एकता लाने का यह निराला ढंग सभी युगों में भारतीय समाज की विशेषता रहा है।" (रामधारी सिंह 'दिनकर' : संस्कृति के चार अध्याय, पृ0 98, तृतीय संस्करण (1962))

भारतीय संस्कृति इस देश में आकर बसने वाली अनेक जातियों की संस्कृतियों के मेल से तैयार हुई है और अब यह पता लगाना बहुत मुश्किल है कि उसके भीतर किस जाति की संस्कृति का कितना अंश है।

भाषिक दृष्टि से भी भारत में एक ओर अद्‌भुत विविधतायें हैं वहीं दूसरी ओर ऐतिहासिक दृष्टि से भिन्न भाषा– परिवारों की भाषाओं के बोलने वालों के बीच तथा एक भाषा परिवार के विभिन्न भाषियों के बीच भाषिक समानता एवं एकता का विकास हुआ है। भाषिक एकता विकसित होने के अनेक कारण हैं। कारणों का मूल आधार उनका एक ही भूभाग में शताब्दियों से साथ–साथ रहने के कारण विकसित सामाजिक सम्पर्क एवं तदुपरान्त पल्लवित सांस्कृतिक एकता है।

भारत की सामाजिक संरचना एवं बहुभाषिकता को ध्यान में रखकर विद्वानों ने भारत को समाज–भाषा वैज्ञानिक विशाल, असाधारण एवं बृहत भीमकाय (जाइअॅन्ट) की संज्ञा प्रदान की है। Ferguson, C.A. : National Socio Linguistic Profile Formulas: In Bright W. (Ed.) Socio-Linguistics, Mounton,1966)

इसकी विवेचना की जा चुकी है कि भारत एक ऐसा भाषिक क्षेत्र है जहाँ विभिन्न भाषा–परिवारों की भाषाएँ बोली जाती हैं तथा हम भारतीय आर्य भाषाओं के विकास की विवेचना करते समय विभिन्न कालों में ' भारतीय आर्य भाषा क्षेत्र ' में विद्‌यमान बहुभाषिकता के बारे में भी संकेत कर चुके हैं। सम्प्रति, हम यह कहना चाहते हैं कि भारत में भिन्न भाषा परिवारों की बोली जाने वाली भाषाएँ आपस में अधिक निकट एवं समान हैं बनिस्पत उन भाषा परिवारों की उन भाषाओं के जो भारतीय महाद्वीप से बाहर के देशों में बोली जाती हैं। उदाहरण के लिए आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ आधुनिक भारतीय द्रविड़ भाषाओं के जितने निकट हैं उतने निकट वे भारोपीय परिवार के अन्य उपपरिवार की भाषाओं के नहीं हैं। भारत की भाषिक एकता को ध्यान में रखकर विद्वानों ने भारत को एक भाषिक–इकाई माना है। (Emeneau, M.B. : India - a linguistic area : In Dell Hymnes (Ed.) Language in Culture and Society, P. 650, Harpper International Etition, 1966)

संस्कृत भाषा का व्यवहार एवं प्रसार :

उत्तर – वैदिक काल में संस्कृत भारत की सभी दिशाओं में चारों ओर फैलती गई। संस्कृत का यह प्रसार केवल भौगोलिक दिशाओं में ही नहीं हो रहा था; सामाजिक स्तर पर मानक संस्कृत से भिन्न अनेक आर्य एवं अनार्य भाषाओं के बोलने वाले समुदायों में भी हो रहा था। **(Burrow,. : T. : The** Sanskrit Language, P. 63, Faber & Faber, London).

संस्कृत भाषा के भारत के विभिन्न भागों एवं विभिन्न सामाजिक समुदायों में व्यवहार एवं प्रसार के कारण दो बातें घटित हुईं –

1. संस्कृत ने अपने प्रसार के कारण भारत के प्रत्येक क्षेत्र की भाषा को प्रभावित किया।

2. संस्कृत भाषा स्वयं भी भारत की अन्य भाषाओं से प्रभावित हुई।

संस्कृत का प्रभाव

संस्कृत के प्रभाव से हम सभी सुपरिचित हैं। इस दिशा में प्रचुर कार्य सम्पन्न हुए हैं। शब्दावली के स्तर पर तत्सम शब्दावली से सभी भारतीय भाषाएँ प्रभावित हैं। मध्यकालीन साहित्यिक तमिल की 'मणिप्रवालम शैली' से भारतीय भाषाओं पर संस्कृत के व्यापक प्रभाव की बात सिद्ध होती है। तकनीकी शब्दावली आयोग के तत्वावधान में 'अखिल भारतीय शब्दावली' के निर्माण का जिन विद्वानों को अनुभव है वे जानते हैं कि शब्द निर्माण के लिए किस प्रकार संस्कृत की शरण में जाना पड़ता है।

संस्कृत की शब्दावली का प्रभाव चिन्तन, धर्म, दर्शन, संस्कृति के क्षेत्रों में सर्वाधिक है।उदाहरणार्थ:

हिंदी	मराठी	गुजराती	बंगला	असमिया	उड़िया	तेलुगु	तमिल	मलयालम	कन्नड़
मंत्र	मंत्र	मंत्र	मंत्र	मंत्र	मंत्र	मंत्रमु	मंदिरम्	मंत्रं	मंत्र
आत्मा	आत्मा	आत्मा	आत्मा	आत्मा	आत्मा	आत्म	आत्तुमा	आत्मावुँ	आत्मा
ईश्वर	ईश्वर	ईश्वर	ईश्वर (श्श)	ईश्वर	ईश्वर	ईश्वरुडु, भगवंतुडु	कडवुळ्	ईश्वरन्	ईश्वर
उपवास	उपवास	उपवास उपबास	उपोस,	उपबास	उपवास	उपवासमु पट्टिनि	उपवासम्	उपवासम्	उपवास
तंत्र नास्तिक	तंत्र नास्तिक	तंत्र नास्तिक	तंत्र नास्तिक	तंत्र नास्तिक	तंत्र नास्तिक	तंत्रमु नास्तिकुडु	तंत्रम् नात्तिकन्	तंत्रं नास्तिकन्	तंत्र नास्ति
पाप पुण्य	पाप पुण्य	पाप पुण्य	पाप पुण्य(न्न)	पाप पुण्य	पाप पुण्य	पापमु पुण्यमु	पावम पुण्णियम्	पापं पुण्यं	पाप पुण्य
पूजा–	पूजा	पूजाअर्चा	पूर्जा–	पूर्जा–	पूर्जा–	पूजलु,	पूजै–	पूजयुं	पूजा

अर्चना	अर्चा		अर्चना	अर्चना	अर्चना	अर्चनलु	अरुच्चनै	आराधनयुं	क्रमगत
अखंड पाठ	अखंड पाठ	अखंड पाठ	अखंड पाठ	अखंड पाठ	अखंड पाठ	एकाहमु, अखंड	अकंड पारायणम्	अखंड नाम जपं	अखंड
आरती	आरती	आरती	आरति	आरति	आरती	संकीर्तन आरति	आरति, दीपरादनै	दीपाराधन	आरति
उपासना	उपासना	उपासना	उपासना	उपासना	उपासना	उपासन	उपासनै	उपासन	उपासन
जपमाला	जपमाळ	जपमाळा	जपमाला	जपमाला	जपमाळा	जपमाल	जपमालै	जपमाल	जपमाल
धूप	धूप	धूप	धूप	धूप	धूप	धूपमु	दूपम्	धूपं	धूप
मुंडन	मुंडण	चौल संस्कार,	मुंडन	मुंडन	मुंडन	पुटटु वेंट्रकलु, मुंडनमु	मुडि एंडुत्तल कुडुमि	मुंडनं	मुंडन

		बाळमोवाळा उतरावावानो संस्कार,							
यज्ञोपवीत	जानवे, यज्ञोपवीत	यज्ञोपवीत	यज्ञोपव्रीत पैतं (ज)	यज्ञोपवीत, (ब)लगुण	जज्ञोपवीत (पइता)	जंध्युम	पूणूल	यज्ञोपवीतं	जनिवा
विवाह	लग्न, विवाह	विवाह (लग्न)	विवाह, बिये	बिया, विवाह	बिबाह	विवाहमु	तिरुमणम्	विवाहं	मदुवं
संस्कार	संस्कार	संस्कार	संस्कार	संस्कार	संस्कार	संस्कारमुलु –कर्मलु	शंडगुगळ	अटियत्तिर ड्.ङळ	संस्कार
अंत्येष्टि	अंत्येष्टि	अंत्येष्टि	अंत्येष्टि (ते)	अंत्येष्टि	अन्नयेष्टि क्रिया	अंत्येष्टि अंत्यक्रियलु	ईमक्कडन	अंत्यकर्मम् उत्तरक्रियं शवदाहम	अंतिम संस्कार
नामकरण	नामकरण	नामकरण	नामकरण्र	नामकरण	नामकरण	नामकरणमु	पंयर शट्टल	नामकरणं	नामकर
वाद्य	वाद्य	वाद्य	वाद्य	वाद्य	वाद्य	वाद्यमुलु	वाद्दिय– ङगण्ळ	वाद्य ड्.ड.ळ	वाद्यग
डमरू	डमरु	डमरु	डमरू	डंबरू	डमरू	डमरू	उडुक्कै	डमरु	डमरु

ढोल	ढोल	ढोल	ढोल	ढोल	ढोल	डोलु	तविल	पर, चंण्ट	डोलु,
ढोलक	ढोलके	ढोलक	ढोलक	ढोलोक	ढोलक	डोलु, मद्देल	डोलक्	ढोलक्कु	डोलक्
तबला	तबला	तबलुं	तबला	तवला– तबला	तबला	तबला	तबला	तबल	तबला
तानपूरा	तंबोरा	तंबूरो	तानपुरा	तानपूरा	तानपूरा	तंबुर	तंबूरा	नुंपुरु,	तंबूरा, तंबूरि
मृदंग	मृदंग	मृदंग	मृदङ्.ग	मृदंग	मृदंग	मृदंगमु	मिरुदंगम्	मृदंगम्	मृदंग
वीणा	वीणा	वीणा	वीण् (न)	बीणा,	बीणबीणा	वीण	वीगै	वीण	वीणं

संस्कृत पर प्रभाव

संस्कृत में 'आर्य भाषा क्षेत्र' की संस्कृतेतर जन भाषाओं एवं आर्येतर भाषाओं से शब्दों को ग्रहण कर उन्हें संस्कृत की प्रकृति के अनुरूप ढालने की प्रवृत्ति का विकास हुआ। इसके कारण एक ओर जहाँ संस्कृत का शब्द भंडार अत्यंत विशाल हो गया, वहीं आगत शब्द संस्कृत की प्रकृति के अनुरूप ढलते चले गए।भारतीय संस्कृति का गहन अध्ययन करने वाले विद्वानों का मत है कि संस्कृत वाङ्मय की अभिव्यक्ति में दक्षिणात्य कवियों, चिन्तकों, दार्शनिकों एवं कलाकारों का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान है (रामधारी सिंह 'दिनकर' : संस्कृति के चार अध्याय, पृ0 44–47)। संस्कृत भाषा में अधिकांश शब्दों के जितने पर्याय रूप मिलते हैं उतने संसार की किसी अन्य भाषा में मिलना विरल है। 'हलायुध कोश' में स्वर्ग के 12, देव के 21, ब्रह्मा के 20, शिव के 45, विष्णु के 56 पर्याय मिलते हैं। इसका मूल कारण यह है कि संस्कृत भाषा का जिन क्षेत्रों में प्रचार–प्रसार एवं प्रयोग – व्यवहार हुआ, उन क्षेत्रों की भाषाओं के शब्द संस्कृत में आते चले गए। पादरी कोल्डवेल ने संस्कृत में आगत ऐसे शब्दों की सूची प्रस्तुत की है जो मूलतः द्रविड़ परिवार की भाषाओं के हैं। उदाहरणार्थ –

अक्का (माता के अर्थ में) / अत्ता (बड़ी बहन के अर्थ में) / अटवी (जंगल)/ अणि (पहिए की धुरी) / अम्बा (माता) / अलि (सखि) / कटुक ↔ कटु (कड़वी रुचि) / कला (व्यावहारिक

कौशल) / कावेरी (नदी का नाम) ⁄ कुटी (झोंपड़ी) / कुणि (अपंग /जिसके हाथ में खोट हो)/कुल (तालाब)/ कोट (किला)/खट्वा (खाट) / नाना (विविध)/ नीर (जल)/ पट्टण (नगर)/ पन्ना ↔ पन्नो (सोना) /पल्ली (नगर या ग्राम)/ भाग/(हिस्सा)/मीन (मछली)/वलक्ष (श्वेत, सफेद)/वला (घिराव)/वलय (घिरे रहना, गोलाकार) / वल्गु (सुन्दर)/वल्गुक (चंदन की लकड़ी)/शव (प्रेत)/ शाव (शव से सम्बन्धित)/ सूक्ति (छल्ला, कुंडल)/ साय (सायंकाल, शाम)/''

(Rt. REV. ROBERT CALDWELL : A Comparative Grammar of the Dravidian or South Indian Family of Languages, pp. 567-575 (1961)).

इस सूची के अतिरिक्त पादरी काल्डवेल ने एक और सूची डॉ गुण्डर्ट की सूची के आधार पर प्रस्तुत की है जिन्हें काल्डवेल द्रविड़ भाषाओं के प्रकाण्ड विद्वान मानते थे। सूची इस प्रकार है –

''उरूण्ड़ा (गोल – एक राक्षस का नाम) ⁄ एडा ↔ एडका (भेड़)/करबाल > करवाल (तलवार)/कर्नाटक (कर =काला, नाट=देश > भीतर का देश जो अपने में घना और काला है–काली मिटटी का देश) ⁄ कुण्ड (रन्ध्र–विवर)/कुक्कुर (कुत्ता)/कोकिला (कोयल)/घोट (घोड़ा)/चम्पक (फूल का नाम)/नारंग (संतरा–फल का नाम)/पिट= पिटक (एक बड़ा टोकरा, डलिया)। पुत्र (लड़का, संतान)/पुन्नाग (सोना)/पेटा (टोकरा)/ पलम (फल) /मरुत्त (ओझा, अभिचारक)/ मर्कट (बन्दर)/मुक्ता (मोती)/ बील (भील, धनुष चलाने वाले)/विरल (खुले हुए)/हेम्ब (भैंस)/ शुंगवेर (अदरख)।''(Ibid, pp. 577-578)

काल्डवेल ने श्री किट्टेल के अगस्त, 1872 में प्रकाशित इंडियन एन्टीक्वेरी के अंक में " The Dravidian Element in Sanskrit Dictionaries" शीर्षक लेख में प्रस्तुत 'अ' एवं 'आ' वर्णों से आरम्भ होने वाले निम्नलिखित शब्दों को उद्घृत किया है :

''अट्टा (ऊपर की अटारी)/ अट्टा (उबले हुए चावल, खाद्य) / अट्टा–हट्टा (बाजार, हाट) / आम (हाँ)/ अर कुटा (पीतल, मिश्रधातु) / आट – आड (खेल की प्रवृत्ति, किसी से खेलना ')/ आलि (खाई, नाली) । कुछ और शब्द – पालना (पालू का अर्थ दूध उससे बना रूप) / वल्ली (बेल, जो वलयित होती है) / मुकुर – मुकुल (कलिका, कली) / कुट (मिटटी का पात्र) / कुठार (कुल्हाड़ी) कड़ी (द्रविड़ रूप)।'' (Ibid, pp. 578-579).

जिस प्रकार संस्कृत एवं द्रविड़ परिवार की भाषाओं के बीच आदान–प्रदान हुआ, उसी प्रकार की प्रक्रिया संस्कृत एवं तिब्बत–चीनी परिवार तथा आग्नेय / आस्ट्रिक / मुंडा परिवार की भारतीय भाषाओं में निष्पन्न हुई। संस्कृत वाड्.मय में आग्नेय अथवा आस्ट्रिक परिवार की भाषाओं के बोलने वालों को निषाद (परवर्ती काल में कोल एवं मुंडा) तथा तिब्बत–चीनी परिवार की भाषाओं के बोलने वालों को किरात कहा गया है। विद्वानों का अनुमान है कि आग्नेय भाषाओं के अनेक शब्दों का संस्कृत में आगमन हुआ है। वनस्पति एवं वन जन्तु सम्बन्धी संस्कृत के अनेक शब्दों की व्युत्पत्ति आस्ट्रिक परिवार की भाषाओं से मानी जाती है। जाँ प्रचिलुस्की ने ऋग्वेद में प्रयुक्त ऐसे

अनेक शब्दों की सूची दी है जो मुंडा उपपरिवार की भाषाओं के हैं। उदाहरणार्थ– लाड्.गल (हल / हल की शक्ल का शहतीर) / वार (घोड़े के गर्दन की भौंरी (Pre-Aryan and Pre-Dravidian, pp. 9-1)

डॉ0 हरिमोहन मिश्र ने भी एक लेख में इस विषय पर प्रकाश डाला है। 'ऋग्वेद का शाल्मलि (सेमल का वृक्ष 10/85/20) और शिम्बल (सेमल का फूल 3/53/22) मुंडा भाषा के शब्द माने जाते हैं। ... . यही हाल मयूर (ऋक0 1/191/14) का है।' (डॉ0 हरिमोहन मिश्र : ऋग्वेदीय भारत की भाषा–स्थिति, परिषद् पत्रिका, वर्ष 8, अंक 3–4, पृ0 52)

आग्नेय परिवार की भाषाओं का सर्वाधिक प्रभाव तिब्बत–चीनी परिवार की भारतीय भाषाओं पर पड़ा है। बी0एच0 हाउसन की मान्यता है कि भारत और तिब्बत के सीमावर्ती हिमालय में बोली जानेवाली तिब्बती–हिमालयी भाषाओं के व्याकरण, वाक्य रचना और शब्दावली पर मुंडा भाषाओं का गहरा प्रभाव पड़ा है।

तिब्बत–चीनी परिवार की भारतीय भाषाओं के बोलने वाले किरातों का उल्लेख यजुर्वेद और अथर्ववेद में मिलता है। तिब्बत–बर्मी उपपरिवार की भारतीय भाषाओं के कुलों (हिमालयी, तिब्बती, बोदो, नगा, कुकिचिन, बर्मी) की आधुनिक भारतीय भाषाओं के अध्ययन से इस दिशा में विचार किया जा सकता है कि किरात भाषाओं के किन–किन शब्दों को संस्कृत ने आत्मसात किया। (उदाहरणार्थ, मिज़ो के 'चव', लिम्बु के 'चाचा', त्रिपुरी के 'चामुँ' एवं 'चाअ', रियांग एवं नोक्ते के 'चाम' आदि शब्दों की पुनर्रचना द्वारा निर्मित शब्द की तुलना संस्कृत की 'चम्' धातु से की जा सकती है।(खाने–पीने के अर्थ में चम् धातु (भ्वा0 पर– चमति, चान्त) 1. पीना, आचमन करना, चढ़ा जाना, 2. खाना, आ–, (आ–चामति) 1. आचमन करना, एक साँस में पी जाना, चाटना)।

नीचे कुछ ऐसे धातु रूप प्रस्तुत हैं जिनका प्रयोग संस्कृत वाड्.मय में हुआ है किन्तु जिनका उल्लेख पाणिनी की अष्टाध्यायी में नहीं हुआ है। अनुमान है कि ये धातु रूप आर्येतर भाषाओं से संस्कृत में आगत हुए। इस सम्बन्ध में विद्वानों से गहन अध्ययन करने की अपेक्षा है। (लेखक को उपरोक्त अध्ययन दिशा जबलपुर में सन् 1965 में डॉ. हीरा लाल जैन से प्राप्त हुई/देखें – प्रोफेसर महावीर सरन जैन : 'जबलपुर में डॉ. हीरालाल जैन', प्राच्य विद्यावार्य डॉ. हीरालाल जैन जन्म शताब्दी स्मारिका, पृष्ठ 90 – 91, जबलपुर,1999)

धातु	अर्थ	रूप
अघुड्	गत्याक्षेप	अड्धते, अड्धिष्ट, आनड्ये।
अर्जण	प्रतियत्न	आर्जयति, आर्जियत्, अर्जया चकार
अटुड	गति	अण्ठते, आण्ठिष्ट, आशशासे
आड्शासूकि	इच्छा	आशास्ते, आशासिष्ट, आशशासे

इ	गति	अयति, अयेत् , अयतु, आयत्, ऐषीत्, इयाय, ईयात्, एता, एष्यति, ऐष्यत्
इजुड	गति	ऐजिष्ट, इ जा चक्रे, इ जामास, इ जाम्बभूव
उगु	गति	उडगा चकार, उड्गामास, उडगाम्बभूव
उष	दाह	ओषति, ओषेत्, ओषतु, औषत् ।
उर्दि	मान और क्रीड़ा	ऊर्दते, और्दिष्ट, ऊर्दा चक्रे
ओवै	शोषण	ओवयात्, ओवयास्ताम्, ओवयासुः ।
कर्ज	व्यथन	कर्जति, ककर्ज, कर्ज्यात्, कर्जिता, कर्जिष्यति, अकर्जिष्यत्
किकिष्ण्	हिंसा	किष्कयते, अचिकिष्कत, किष्कया चकं
कुत्सिण्	अवक्षेप	कुत्सयते, अचुकुत्सत, कुत्सया चक्रे
कूणिण	संकोचन	कूणयते, अचूकुणतं, कुणया चक्रे
कुख्, खुज्	स्तेय	खोजति, कोजति, खोजेत्, कोजेत्, खोजतु, कोजतु, अखोजत्, अकोजत्, अखोजीत्, अकोजीत्, खुखोज, कुकोज, खुज्यात्
कृ	हिंसा	कृणाति, कृणीयात्, कृणातु, अकृणात्, अकारीत्, चकार, कर्यात् ।
केवड्	सेवन	केवते, अकेविष्ट, चिकेवे ।
वनथ	हिंसा	वनथति, अवनाथीत्, अवनथीत्, चवनाथ
गड	सेवन	गडति, अगाडीत्, अगडीत्
गग्ध ------ **गुंत्**	हसन ---------- पुरीषोत्सर्ग	गग्धति, गग्धेत्, गग्धतु, अगध्धत्,, अगग्धीत्, गगग्ध ------------------------------------ गुवति, गुवेत्, गुवतु, अगुवत्, अगुषीत्, जुगाव, गूयात्
जेषड्	गति	जेषते, अजेषिष्ट, जिजिषे
टुड	निमज्जन	टुडति, अटुडीत्, टटोड
डंपि, डिंपि	संघात	डम्पयते, डिम्पयते, अडडम्पत, अडी डिम्पत, डम्पया चक्रे, डिम्पया चक्रे
डबु, डिबुण	क्षेप	डम्बयति, डिम्बयति, अडडम्बवत्, अडि डिम्बत्, डम्बया चकार ।
तुवुण्	मर्दन	तुम्बयति, अतुतुम्बत्, तुम्बया चकार
त्सर	छद्मगति	त्सरति, अत्सारीत्, तत्सार
नख	गति	नखति, नखेतु, नखतु, अनखत्, अनखीत्, ननाख, नख्यात्
नर्व	गति	नर्वति, अनर्वीत्, ननर्व
निवु	सोचन	निन्वति, अनिन्वीत्, निनिन्व

निषू	सेवन	नेषति, अनेषीत्, निनेष
पिच्चण्	कुट्टन	पिच्चयति, अपिपिच्चत्, पिच्चया चकार
ब्लीश	वरण	ब्लिनाति, अब्लेषीत्, बिब्लाय
ब्लेष्कण्	दर्शन	ब्लेष्कयति, अविश्लेष्कण् ब्लेष्कयामास
भुडत्	संघात	भुडति, अभुडीत्, बुभुडिम
मिथग्	मेधा और हिंसा	मेथति, अमेथीत्, मिमेथ, मेथते, अमेथिष्ट, मिमेथे।
मेथग	संगम	मेथति, अमेथीत्, मिमेथ, मेथते, अमेथिष्ट, मिमेथे।
वर्फ	गति	वर्फति, अवर्फीत् , ववर्फ
बाघड	रोटन	बाधते, अबाधिष्ट, बबाधे
हेड	वैष्टन	हेडति, अहेडीत्, जिहेड

पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश तथा आर्येत्तर भाषाएँ एवं आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ

प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषाओं का प्रभाव आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं पर पड़ा है तथा इस सम्बन्ध में लेखक ने अलग से विस्तार से विवेचना की है (देखें – प्रोफेसर महावीर सरन जैन : प्राकृत एवं अपभ्रंश का आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं पर प्रभाव, The Vikram: Journal of Vikram University, Ujjain, Vol. X X I , No.2 & 4,pp.73 – 88 (May & Nov.,1977/ The Influences of the ' Prakrit' and 'Apabhransha' Languages on the modern Indo-Aryan Languages : ऋषिकल्प डॉ. हीरालाल जैन स्मृति ग्रन्थ, पृष्ठ 120 – 139, डॉ. हीरालाल जैन जन्म शताब्दी समारोह समिति, जबलपुर, 2001) ।

सम्प्रति यह कहना अभीष्ट है कि पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषाओं के गहन अध्ययन से इस दिशा में संकेत प्राप्त होते हैं कि जहाँ इन भाषाओं ने आर्येत्तर भाषाओं को प्रभावित किया है वहीं इन भाषाओं पर द्रविड़, आग्नेय (मानख्मेर एवं मुंडा) एवं तिब्बत–बर्मी (किरात) परिवार/ उपपरिवार की भाषाओं का प्रभाव पड़ा है। यह प्रभाव शब्दावली एवं ध्वनि व्यवस्था के स्तरों पर तो है ही क्रिया एवं क्रिया –विशेषण की संरचना के स्तर पर भी है। द्रविड़ परिवार की भाषाओं के आर्य परिवार की भाषाओं की क्रिया वाक्यांशों की संरचना पर पड़े प्रभाव की ओर विद्धानों का ध्यान आकृष्ट हुआ हैं। परस्पर प्रभाव का मूल कारण पालि भाषा का तथा बाद में शौरसेनी प्राकृत / शौरसेनी अपभ्रंश का अखिल भारतीय स्तर पर प्रतिष्ठित होना / सम्पर्क भाषा बनना था। भारत के विभिन्न भागों एवं विभिन्न सामाजिक समुदायों में व्यवहार एवं प्रसार के कारण जिस प्रकार संस्कृत भाषा ने एक ओर भारत के प्रत्येक क्षेत्र की भाषा को प्रभावित किया तथा दूसरी ओर स्वयं भी भारत की अन्य भाषाओं से प्रभावित हुई उसी प्रकार पालि तथा बाद में शौरसेनी प्राकृत

/ शौरसेनी अपभ्रंश ने भी एक ओर भारत के प्रत्येक क्षेत्र की भाषा को प्रभावित किया वहीं वे स्वयं भी भारत की अन्य भाषाओं से प्रभावित हुईं।

पालि तथा अशोक कालीन परवर्ती शिलालेखों के भाषिक रूपों से पता चलता है कि ईसा पूर्व पहली शती के अन्त तक शासन के कार्यों तथा साहित्य के माध्यम के रूप में भाषा का एक अखिल भारतीय रूप प्रतिष्ठित हो चुका था। (डॉ0 सुकुमार सेन : तुलनात्मक पालि – प्राकृत–अपभ्रंश व्याकरण, अनुवादक– महावीर प्रसाद लखेड़ा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1969)

जैन धर्म की परम्परागत मान्यता के अनुसार चन्द्रगुप्त मौर्य के शासन काल में आचार्य भद्रबाहु श्रुत केवली ने अपने निमित्त ज्ञान से यह जानकर कि निकट भविष्य में अकाल पड़ने वाला है, अपने संघस्थ 24 हजार साधुओं में से 12 हजार साधुओं के साथ दक्षिण के लिए प्रस्थान किया तथा मैसूर राज्य (कर्नाटक) में श्रवणबेल गोल के पास चिक्कबेट्ट गुफा में रहकर प्राण त्याग किया । इन 12 हजार साधुओं ने शोरसेनी प्राकृत में उपदेश दिया तथा ग्रन्थों की रचना की । उस समय दक्षिण के निवासी सूरसेन प्रदेश (मथुरा नगरी) में आवागमन के कारण शौरसेनी प्राकृत से अल्प परिचित थे। उत्तर भारत से गए इन 12 हजार साधुओं के दक्षिण में विचरण करने, उपदेश देने एवं सत्संग के कारण दक्षिण देशवासी शौरसेनी प्राकृत से भली भांति परिचित हो गए। यही कारण है कि दक्षिण में जन्मे दिगम्बर जैन आचार्यों ने भी शौरसेनी प्राकृत में ही अपने ग्रन्थों की रचना की । इन ग्रन्थों में दक्षिणी भाषाओं का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित है।

अपभ्रंश के परवर्ती युग की 'अवहट्ठ' में अनेक ऐसे संज्ञा पद, क्रिया विशेषण, विशेषण तथा क्रियापद मिलते हैं, जिनका स्रोत आर्येत्तर है। यथा वर/ वड (मूर्ख) / चिखिल्ल (कीचड़ भरा) / बब्ब (गूँगा) / बड्ड (बड़ा) / खोज्ज (खोजना) / वुड (डूबना)।

भारतीय भाषाओं में आगत तुर्की, अरबी एवं फारसी शब्द

इस्लाम के कारण तुर्की –अरबी–फारसी से आगत शब्दों ने भारत की सभी भाषाओं को प्रभावित किया है। यह बात अलग है कि कश्मीरी, सिन्धी, पंजाबी तथा उर्दू पर यह प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक है। इस संदर्भ में हम यह भी स्पष्ट करना चाहेंगे कि हिन्दुस्तान में एक ही देश, एक ही जुबान तथा एक ही जाति के मुसलमान नहीं आए। सबसे पहले यहाँ अरब लोग आए। अरब सौदागर, फ़कीर, दरवेश सातवीं शताब्दी से यहाँ आने आरम्भ हो गए थे तथा आठवीं शताब्दी (711–713 ई.) में अरब लोगों ने सिन्ध एवं मुलतान पर कब्जा कर लिया था। इसके बाद तुर्की के तुर्क तथा अफ़गानिस्तान के पठान लोगों ने आक्रमण किया तथा यहाँ शासन किया। शहाबुद्दीन गौरी (1175–1206) के आक्रमण से लेकर गुलामवंश (1206–1290), खिलजीवंश (1290–1320), तुगलक वंश (1320–1412), सैयद वंश (1414–1451) तथा लोदीवंश (1451–1526) के शासनकाल तक हिन्दुस्तान में तुर्क एवं पठान जाति के लोग आए तथा तुर्की एवं पश्तो भाषाओं तथा तुर्क–कल्चर तथा पश्तो–कल्चर का प्रभाव पड़ा।

मुगल वंश की नींव डालने वाले बाबर का संबंध यद्यपि मंगोल जाति से कहा जाता है और बाबर ने अपने को मंगोल बादशाह 'चंगेज़ खॉ' का वंशज कहा है और मंगोल का ही रूप 'मुगल' हो गया मगर बाबर का जन्म मध्य एशिया क्षेत्र के अंतर्गत फरगाना में हुआ था। मंगोल एवं तुर्की दोनों जातियों का वंशज बाबर वहीं की एक छोटी सी रियासत का मालिक था। उज़्बेक लोगों के द्वारा खदेड़े जाने के बाद बाबर ने अफ़गानिस्तान पर कब्जा किया तथा बाद में 1526 ई. में भारत पर आक्रमण किया। बाबर की सेना में मध्य एशिया के उज़्बेक एवं ताज़िक जातियों के लोग थे तथा अफ़गानिस्तान के पठान लोग थे।

बाबर का उत्तराधिकारी हुमायूँ जब अफ़गान नेता शेरखॉ (बादशाह शेरशाह) से युद्ध में पराजित हो गया तो उसने 1540 ई. में 'ईरान' में जाकर शरण ली। 15 वर्षों के बाद 1555 ई. में हुमायूँ ने भारत पर पुनः आक्रमण कर अपना खोया हुआ राज्य प्राप्त किया। 15 वर्षों तक ईरान में रहने के कारण उसके साथ ईरानी दरबारी सामन्त एवं सिपहसालार भारत आए। हुमायूँ, अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, औरंगजेब आदि मुगल बादशाह यद्यपि ईरानी जाति के नहीं थे, 'मुगल' थे (तत्वतः मंगोल एवं तुर्की जातियों के रक्त मिश्रण के वंशधर) फिर भी इन सबके दरबार की भाषा फारसी थी तथा इनके शासनकाल में पर्शियन कल्चर का हिन्दुस्तान की कल्चर पर अधिक प्रभाव पड़ा। इस प्रकार जिसे सामान्य व्यक्ति एवं बहुत से विद्वान लोग भारत की संस्कृति पर इस्लाम संस्कृति का प्रभाव कहते हैं या समझते हैं वह इस्लाम धर्म को मानने वाली विभिन्न जातियों की संस्कृतियों के प्रभाव के लिए अंग्रेजों द्वारा दिया हुए एक नाम है, लफ़्ज़ है। अरबी, तुर्की, उज़्बेकी, ताज़िकी, अफगानी या पठानी, पर्शियन या ईरानी अनेक जातियों की भाषाओं एवं संस्कृतियों का हमारी भाषाओं पर तथा हिन्दुस्तान की कल्चर पर प्रभाव पड़ा है।

जीवन के जिस क्षेत्र में हमने संस्कृति के जिस तत्व को ग्रहण किया तो उसके वाचक शब्द को भी अपना लिया। तुर्की से कालीन (क़ालीन) और गलीचा (ग़ालीचः), अरबी से कुर्सी तथा फ़ारसी से मेज़, तख्त (तख़्त) तथा तख़ता शब्द आए। फ़ारसी से जाम तथा अरबी से सुराही तथा साकी (साक़ी) शब्दों का आदान हुआ। कंगूरा (फ़ारसी–कंगूरः), गुंबद, बुर्जी (अरबी–बुर्ज) तथा मीनार आदि शब्दों का चलन हमारी स्थापत्यकला पर अरबी–फारसी कल्चर के प्रभाव को बताता है। कव्वाली (फ़ारसी–क़व्वाली), गजल (अरबी –ग़ज़ल) तथा रुबाई शब्दों से हम सब परिचित हैं क्योंकि उत्तर भारत में कव्वाल लोग कव्वाली गाते हैं तथा अन्य संगीतज्ञ गजल एवं रुबाई पढ़ते हैं। जब भारत के वातावरण में शहनाई गूँजने लगी ते अरबी शब्द 'शहनाई' भी बोला जाने लगा। मृदंग और पखावज के स्थान पर जब संगत करने के लिए तबले का प्रयोग बढ़ा तो तबला (अरबी–तब्लः) शब्द हमारी भाषाओं का अंग बन गया। धोती एवं उत्तरीय के स्थान पर जब पहनावा बदला तो कमीज (अरबी–क़मीस, तुर्की–कमाश), पाजामा (फ़ारसी–पाजामः), चादर, दस्ताना (फ़ारसी–दस्तानः), मोजा (फ़ारसी – मोजः) शब्द प्रचलित हो गए।

जब क़ाबुल और कंधार (अफ़गानिस्तान) तथा बुख़ारा एवं समरकंद प्रदेश (उज़्बेकिस्तान) से भारत में मेवों तथा फलों का आयात बढ़ा तो भारत की भाषाओं में अंजीर, किशमिश, पिस्ता,

बादाम, मुनक्का आदि मेवों तथा आलू बुखारा, खरबूज़ा, खुबानी (फ़ारसी–ख़ूबानी), तरबूज़, नाशपाती, सेब आदि फलों के नाम– शब्द भी आ गए। मुस्लिम–शासन के दौरान मध्य एशिया और ईरानी अमीरों के रीतिरिवाजों के अनुकरण पर भारत के सामन्त भी बड़ी–बड़ी दावतें देने लगे थे। यहाँ की दावतों में गुलाबजामुन, गज्जक, बर्फी, बालूशाही, हलवा–जैसी मिठाइयाँ परोसी जाने लगीं। खाने के साथ अचार का तथा पान के साथ गुलकंद का प्रयोग होने लगा। गर्मियों में शरबत, मुरब्बा, कुल्फी का प्रचलन हो गया। निरामिष में पुलाव तथा सामिष में कबाब एवं कीमा दावत के अभिन्न अंग बन गए । श्रृंगार–प्रसाधन तथा मनोरंजन के नए उपादान आए तो उनके साथ उनके शब्द भी आए । खस का इत्र, साबुन, खिजाब, सुर्मा, ताश आदि शब्दों का प्रयोग इसका प्रमाण है। कागज़, कागज़ात, कागज़ी – जैसे अरबी शब्दों से यह संकेत मिलता है कि संभवतः अरब के लोगों ने भारत में कागज बनाने का प्रचार किया। मीनाकारी, नक्काशी, रसीदाकारी, रफूगीरी – जैसे शब्दों से कला–कौशल के क्षेत्र में शब्दों से जुड़ी जुबानों की कल्चर के प्रभाव की जानकारी मिलती है।

भारतीय भाषाओं में तुर्की, अरबी एवं फारसी आदि भाषाओं से आगत कुछ शब्द तालिका में उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं –

हिन्दी	पंजाबी	कश्मीरी	सिंधी	मराठी	गुजराती	बंगला	असमिया	उड़िया	तेलुगु	तमिल	मलयालम	कन्नड़
कबाब	कबाब	कबाबुं	कबाबु	कबाब	कबाब	काबाब	काबाब	कबाब	कबाबु	वरुत्त इरैच्चि तुण्डु	कबाब	कबाबु
कागज	कागज	काकज़	काग़ज़ु	कागज	कागज	कागज	कागज	कागज	कागितमु	कागिदम्	कटलासुँ	
खजाना	खज़ाना	खजानुं	ख़जानो	खजिना	खजानो	खाजाञ्चि खाना	कोष	खजणा	खजाना	कजाना	खजानावुं	खजानं
ज़मानत	जमानत	ज़मानथ		जामीन	जामिन	जामिन	आमानत	जामिन टंका	जामीनु	पिणैयम	संक्यूरिटिट जाम्यत्तुक्र	आधार
तबला	तबला	तबलुं	तबिलो	तबला	तबलुं	तबला	तबला	तबला	तबला	तबला	तबल	तबला
नमाज़	नमाज	न्यमाज़	नमाज़	नमाज	नमाज	नामाज	नामाज़	नमाज	नमाजु	नमाज	नमाज	नमाजु
पाजामा	पजामा	पांजामुं	पाजामो	पायजमा	पायजामो	पायजामा	पायजामा	पाइजामा	पाइजमा	पैजामा	पेजाम	पेजामा
मस्जिद	मसीत	मंशीद	मस्जिदि	मशीद	मशीद	मसजिद	मछजिद	मसजिद	मसीदु	मसूदि	मुस्लिम पळ्ळि	मसीदि
रोज़ा	रोजा	रोजुं	रोज़ो	रोजा	रोजा	रोजा	रोजा	रोज़ा	ओक्क पोद्दु	रोजा	नांय्म्पुँ	उपवास
वसूली	वुसूली	वॅसूली	वसूली	वसुली	वसूलात	उसुल	आदाय	असुलि	वसूलु	वसूलित्तल्	वसूल	वसूलि
वारिस	वारस	वॉरिस	वारिसु	वारस	वारस	वारिस	बारिस	वारस	वारसुडु	वारिसु	अनन्त रावकशि	वारसुदार
शरबत	शरबत	शरबत	शर्बतु	सरबत	शरबत	शरबत	चरबत	सर्बत	शरबत्तु	शर्बत्तु	सर्वत्तुँ	पानक
शहनाई	शहिनाई	संरुँनय	शहिनाई	सनई	शरणाई	सानाइ	चानाइ	शहनाई	सन्नाइ	चिन्न नाद स्वरम्	शहनायि / नादस्वरम्	शहनाई

भारत की मौलिक एकता पर विचार करते हुए डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल का कथन है कि ''भारतीय साहित्य की एकात्मकता के मूल में भारत की मूल अखिल भारतीय संस्कार – भाषा संस्कृत का योग तो अद्वितीय है ही, परन्तु उसके साथ अन्य अखिल भारतीय भाषाओं– प्राकृत, अपभ्रन्श और अरबी व फारसी का कम योगदान नहीं है।'' (भारत की मौलिक एकता, पृ0–124)

भारतीय भाषाओं में अंग्रेजी की शब्दावली

अंग्रेजी से आगत शब्दावली भी सभी भारतीय भाषाओं की भाषिक एकता को पुष्ट एवं सबल बना रही है। इस कारण भारतीय भाषाओं का आधुनिकीकरण हो रहा है। लेखक ने अन्यत्र एक लेख में विस्तार से विवेचना की है कि किस प्रकार समस्त भारतीय भाषाओं में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है। प्रत्येक भाषा का 'ऑफिस' जानेवाला आम आदमी रात को सोने से पहले 'अलार्म' लगाता है। सबेरे 'ब्रुश' पर 'पेस्ट' लगाकर 'टूथ ब्रश' करता है, 'लैदर क्रीम' लगाकर 'रेज़र' से 'शेव' करता है, 'सोप' एवं 'शैम्पू' से नहाता है, 'हेयर ऑयल' लगाकर अपने बाल बनाता है, 'अंडरवियर', 'शर्ट', 'पैंट' तथा जाड़ों में 'पुलओवर', ' कोट', 'सूट', 'ओवरकोट' पहनकर 'साइकिल'/ 'बस'/ 'लोकल ट्रेन' से अपने ऑफिस जाता है। प्रत्येक भाषा का 'साहब' भी अपने ऑफिस जाते हुए यह सब करता है, यह बात अलग है कि वह 'शर्ट' पर 'टाई' भी लगाता है, 'शर्ट' का 'कॉलर' ठीक करता है, 'शू' / 'बूट' पहनकर 'चेयर' पर बैठकर 'टैबिल' पर लगा 'ब्रेकफास्ट' कर अपनी 'कार' से अपने ऑफिस जाता है। अब प्रत्येक भाषा के मध्यम स्तर के परिवारों में 'चेयर','टेबिल','सोफासेट','टेलिफोन', 'मोबाइल','टी. वी.', 'वाशिंग मशीन' आदि सामानों / उपकरणों का प्रयोग आम हो गया है और इस कारण इन शब्दों का प्रयोग भी प्रत्येक भाषा का व्यक्ति करता है।सभी भारतीय भाषाओं के कम्प्यूटर पर काम करने वाले व्यक्ति **अटैचमेन्ट, इन्टरनेट, ई – कॉमर्स, एक्सप्लोरर, एड्रेस वार, एन्टीवायरस, कन्टेंट, कम्प्यूटर, कॉपी, टाइप, टेक्स्ट, टैग, ट्रान्सफर, डाउनलोड, डाक्यूमेंट, डाटा, नोटपेड, प्रोग्राम, फाइल, फ़ार्मेट, ब्राउसर, मेमोरी, मेल, मोडेम, ब्राउसर, यूज़र, लिंक, वर्ल्ड वाइड वेब, वेब, वेब साइट, वेब साइट पेज, सर्फिंग, सर्वर, साइट, साफ्टवेयर, होमपेज़** आदि शब्दों का धड़ल्ले से प्रयोग करते हैं।

वर्तमान में प्रशासन, विज्ञान, तकनीक एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में समान शब्दावली सभी भारतीय भाषाओं की सम्पदा है।केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा प्रकाशित 'अखिल भारतीय शब्दावली' में वर्णित इन विभिन्न विषयों से सम्बन्धित लगभग 400 शब्दों में से 99 प्रतिशत शब्द सभी भारतीय भाषाओं में समान हैं ।

आर्य एवं द्रविड़ परिवार की भाषाओं में स्वनिक तत्वों का परस्पर आदान–प्रदान

आर्य एवं द्रविड़ परिवार की भाषाओं में शब्दावली के स्तर पर परस्पर आदान–प्रदान के कारण आर्य एवं द्रविड़ परिवार की भाषाओं के स्वनों (ध्वनियों) को ग्रहण करने की प्रक्रिया आरम्भ हुई। जिन विद्वानों ने आद्य भारोपीय भाषा की स्वनिमिक–व्यवस्था का अनुमान किया है, उनके अनुसार उसमें मूर्द्धन्य स्वनों (ध्वनियों) का अभाव था। भारोपीय परिवार की भारतीय आर्य–शाखा के उपलब्ध प्राचीनतम रूप– वैदिक संस्कृत – में, मूर्द्धन्य स्वनों (ध्वनियों) का प्रयोग हुआ है। अधिकांश विद्वानों की मान्यता है कि मूर्द्धन्य स्वनों (ध्वनियों) का प्रयोग द्रविड़ भाषाओं के प्रभाव के कारण हुआ है। मध्यकालीन भारतीय आर्य–भाषा काल में पालि एवं प्राकृत आदि भाषाओं में द्रविड़ परिवार की भाषाओं के कारण ह्रस्व 'ऍ' एवं 'ऑ' स्वरों का विकास हुआ। इसी प्रकार आद्य द्रविड़ भाषा में महाप्राण व्यंजन स्वनों (ध्वनियों) का अभाव है। तमिल तथा कुछ अन्य द्रविड़ भाषाओं में आज भी इन स्वनों (ध्वनियों) का प्रयोग नहीं होता, किन्तु द्रविड़ परिवार की अन्य भाषाओं यथा तेलुगु, मलयालम एवं कन्नड़ आदि द्रविड़ परिवार की भाषाओं में महाप्राण व्यंजन स्वनों (ध्वनियों) का प्रयोग होने लगा है। इस प्रकार जहाँ द्रविड़–परिवार की भाषाओं ने भारतीय आर्य भाषाओं को मूर्द्धन्य आदि स्वन (ध्वनियाँ) प्रदान किए हैं, वहीं अधिकांश आधुनिक द्रविड़ भाषाओं ने भारतीय आर्य–परिवार की भाषाओं से महाप्राण व्यंजन स्वनों (ध्वनियों) का आदान किया है।

आर्य एवं द्रविड परिवार की भाषाओं में शब्दगत रचना

दोनों परिवारों की आधुनिक भाषाओं में भाषिक – व्यवस्था एवं संरचनात्मक समानताओं का भी विकास हुआ है। इस सम्बन्ध में देश के भाषा–वैज्ञानिकों का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट होना चाहिए तथा इन परिवारों की भाषाओं के सादृश्य के एककालिक अध्ययन सम्पन्न होने चाहिए।

आधुनिक आर्य भाषाओं में परसर्गों का विकास हो रहा है जो द्रविड़–परिवार की भाषाओं की शब्दगत रचना के अनुरूप है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की परसर्गों की योजना प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं की शब्दगत रचना से भिन्न है। संस्कृत एवं हिन्दी की शब्दगत रचनाओं के तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट है। हिन्दी में 'ने', 'को', 'से' इत्यादि परसर्ग संज्ञा आदि शब्दों के पश्चात् जुड़कर उनका सम्बन्ध वाक्य के किसी दूसरे शब्द के साथ व्यक्त करते हैं। संस्कृत में संज्ञा शब्द का वाक्य के किसी दूसरे शब्द से सम्बन्ध द्योतित करने के लिए शब्द की ' पद सिद्धि' विभक्तियों के द्वारा संश्लिष्ट रूप में होती थी। संस्कृत व्याकरणों में सम्बन्ध द्योतक ये विभक्तियाँ आठ कारकों को सिद्ध करती हैं। हिंदी में विभक्ति के धरातल पर किसी भी संज्ञा शब्द के प्रत्येक वचन में अधिकतम तीन रूप मिलते हैं। उनका उन रूपों से वाक्य के अन्य शब्दों के साथ सम्बन्ध द्योतित नहीं होता। हिन्दी में यह कार्य विभक्तिमय रूप के पश्चात् जुड़ने वाले 'ने', 'को', 'से' आदि परसर्ग करते हैं।

इसी प्रकार आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की कृदन्तीय रूपों एवं संयुक्त क्रियाओं की योजना भी आधुनिक द्रविड़ भाषाओं की शब्दगत रचना के अधिक नज़दीक है। यद्यपि भाषा–वैज्ञानिक इस विषय पर एकमत नहीं है कि आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में संयुक्त क्रियाओं का प्रयोग केवल द्रविड़ भाषाओं के प्रभाव के कारण है, तथापि संयुक्त क्रियाओं के बाहुल्य का कारण तो द्रविड़ भाषाओं के प्रभाव को माना जा सकता है।

आधुनिक भारतीय द्रविड़ भाषाओं में भी ऐसे अनेक परिवर्तन हुए हैं जो प्राचीन द्रविड़ भाषा की प्रकृति के अनुरूप नहीं है तथा आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की वैयाकरणिक व्यवस्था के निकट हैं। आधुनिक भारतीय द्रविड़ भाषाओं में से कुछ भाषाओं में संश्लिष्ट नकारात्मक क्रिया रूपों का उत्तरोतर ह्रास हो रहा है एवं उनमें निषेधात्मक अव्यय एवं क्रिया रूपों के अलग–अलग प्रयोग द्वारा नकारात्मक वाक्यों की रचना की प्रवृत्ति बढ़ रही है। आद्य द्रविड़ भाषा में निषेधात्मक अव्यय का प्रयोग क्रिया रूप के साथ संश्लिष्ट रूप में होता था। तमिल आज भी अपनी इस विशिष्टता को बनाए हुए है। समस्त भारतीय आर्य भाषाओं में निषेधात्मक अव्यय का प्रयोग क्रिया रूप से विभक्त रूप में होता है। भारतीय आर्यभाषाओं की इस रूपिम/शब्दगत रचना के अनुरूप ही भारतीय द्रविड़–परिवार की कुछ आधुनिक भाषाओं में निषेधात्मक अव्यय का क्रिया रूप के साथ संश्लिष्ट रूप में नहीं अपितु विभक्त रूप में प्रयोग मिलता है। इसको तेलुगु से एक उदाहरण लेकर समझाया जा सकता है जिसमें निषेधात्मक अव्यय 'लेदु' क्रिया से विभक्त रूप में प्रयुक्त है :

नेनु पोवुदुनु = मैं जाऊँगा । नेनु पोवटमु लेदु = मैं नहीं जाऊँगा।

आधुनिक द्रविड़ भाषाओं में विशेषणों एवं क्रिया–विशेषणों की जिस रूप में संरचना की जा रही है तथा उनका जिस प्रकार विकास हो रहा है उस पर भी भारतीय आर्य भाषा –परिवार की भाषाओं का प्रभाव देखा जा सकता है।

आर्य एवं द्रविण परिवार की भाषाओं की वाक्यविन्यासी संरचना

वाक्य–संरचना की दृष्टि से भी दोनों परिवारों की भाषाओं में सादृश्य है। दोनों परिवारों की भाषाओं के इस सादृश्य को लक्ष्य करके डॉ0 सुनीति कुमार चाटुर्ज्या ने लिखा है: 'द्रविड़ परिवार की भाषाओं –यथा तमिल अथवा कन्नड़ की भाषा का कोई वाक्य साधारणतः बंगला अथवा हिन्दी का वाक्य बन सकता है, यदि हम उस वाक्य में प्रयुक्त द्रविड़ शब्द–रूपों के स्थान पर, शब्दक्रम में परिवर्तन किये बिना ही, हिन्दी अथवा बंगला भाषा के समानर्थक शब्द–रूपों का प्रयोग कर दें। किन्तु इस विधि से फारसी अथवा अंग्रेजी के वाक्यों को आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के वाक्यों में रूपायित करना सम्भव नही है'।

यद्यपि डॉ0 चाटुर्ज्या का यह कथन प्रत्येक द्रविड़ भाषा के प्रत्येक प्रकार के वाक्य के लिए ठीक नहीं बैठता किन्तु सामान्यतः यह सत्य है। नीचे, हिन्दी एवं तेलगु के वाक्यों द्वारा दोनो परिवारों की भाषाओं की वाक्य–संरचना के सादृश्य की प्रवृति को पहचाना जा सकता है।

हिन्दी – हम सत्य कथा कहते हैं।

तेलगु – मेमु सत्यमइना कथनु चेपचुन्ननामु ।

हिन्दी – वह अध्यापक उन लड़कों को मारता है।

तेलगु – आ पंतुलु पिल्ललनु कोट्टुताडु।

इनसे वाक्यों में वैयाकरणिक संवर्गों का समान क्रम स्पष्ट है। वाक्यात्मक रचना की दृष्टि से भारतीय भाषाओं की एकता के सम्बन्ध में विस्तृत विवेचन अपेक्षित है।

उदाहरणार्थ, भारतीय भाषाओं में सकर्मक क्रियाओं वाली वाक्यात्मक संरचनाओं में कर्ता, कर्म एवं क्रिया पदबंधों का क्रम निम्न है :

प्रकार्यात्मक कोटि	कर्ता	कर्म	क्रिया
संरचनात्मक इकाई	पदबन्ध	पदबन्ध	पदबन्ध
पदबन्ध	संज्ञा पदबन्ध (NP)	संज्ञा पदबन्ध (NP)	क्रिया पदबन्ध (VP)
उदाहरण	शिकारी ने	एक शेर	मारा

भारोपीय परिवार भारोपीय परिवार की यूरोपीय भाषाओं में यह क्रम भिन्न है। यथाः

प्रकार्यात्मक कोटि	कर्ता	क्रिया	कर्म
पद बंध	संज्ञा पदबंध(NP)	क्रियापदबंध (VP)	संज्ञा पदबंध(NP)
उदाहरण	The hunter	shot	a tiger

उदाहरणार्थ, नमूने के तौर पर आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में से हिन्दी, बंगला, मराठी एवं आधुनिक भारतीय द्रविड़ भाषाओं में से तमिल, तेलगु, मलयालम, कन्नड़ के वाक्यों द्वारा दोनों परिवारों की भाषाओं के वाक्यों की समान संरचना को स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है:(लेखक को यह सामग्री केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के हैदराबाद केन्द्र के प्रोफेसर एवं क्षेत्रीय निदेशक डॉ. टी. के. नारायण पिल्लै के सौजन्य से प्राप्त हुई)

भाषा का नाम	संज्ञापदबंध(NP)	संज्ञा पदबंध(NP)	क्रियापदबंध (VP)
हिन्दी	राहुल द्रविड़	अच्छी क्रिकेट	खेलता है
बंगला	राहुल द्रविड	भालो क्रिकेट	खेले
मराठी	राहुल द्रविड	चांगला क्रिकेट	खेळतो
तमिल	राहुल द्रविड	क्रिकेट्टु नल्ल	विळ्याटिकिरान
तेलुगु	राहुल द्रविड	क्रिकेट बागा	आडुताडु
मलयालम	राहुल द्रविड	नल्लवण्णम्क्रिकेट्टु	कळिक्कुम
कन्नड़	राहुल द्रविडु	क्रिकेटु चन्नागी	आडुताने

(2)

भाषा का नाम	अव्यय पदबंध	संज्ञा पदबंध	क्रियापदबंध
हिन्दी	क्लास में	टीचर	पढ़ा रहा है
बंगला	क्लासे	टीचर	पोड़ाच्छे
मराठी	वर्गात्	टीचर	शिकवत आहे
तमिल	क्लासिल	टीचर	पाठमचोल्लिकोडुक्किरार
तेलुगु	क्लासुलो	टीचर	चदुवु चेप्पुतुन्नाडु
मलयालम	क्लासिल	टीच्चर	पठिप्पिच्चुकोण्टिरिक्कुन्नु
कन्नड़	क्लासनल्लि	टीचरु	आदेशिचताने

(3)

भाषा का नाम	सर्वनाम पदबंध	अव्यय पदबंध	क्रियापदबंध
हिन्दी	उसने	कोर्ट में	अपील की
बंगला	से	कोर्टे	आपील कोरलो
मराठी	त्याने	कोर्टात	अपील केली
तमिल	अवन्	कोर्टिल	अप्पील चेय्तिरुकिरान
तेलुगु	अतनु	कोर्टलो	अपील चेसाडु
मलयालम	अयाळ्	कोर्ट्टिल	अप्पीलकोटुत्तु
कन्नड़	अष्टे	कोर्टनल्लि	अपील माडिताने

भारत में बोली जाने वाली भिन्न भाषा परिवारों की भाषाओं के समान क्रोड के वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित अध्ययन की आवश्यकता असंदिग्ध है। किसी भी विषय का भेद दृष्टि से अध्ययन करने पर जहाँ हमें अन्तर, असमानताएँ, भिन्नताएँ अधिक दिखाई देती हैं, उसी विषय का अभेद दृष्टि से अध्ययन करने पर हमें एकता, समानता सादृश्य नज़र आता है। विद्वानों ने भारत की भाषाओं के भेदों की जाँच पड़ताल तो बहुत की है; ' बाल की खाल ' बहुत निकाली है। कामना है कि विद्वान लोग भारत की भाषाओं में विद्यमान सादृश्य के सूत्रों की खोज के काम में भी उसी निष्ठा के साथ प्रवृत्त हों जिससे भारत की भाषिक एकता की अवधारणा और अधिक स्पष्ट एवं उजागर हो सके।

प्रोफेसर महावीर सरन जैन

(सेवा निवृत्त निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान)

123, हरि एन्कलेव

बुलन्द शहर – 203001

mahavirsaranjain@gmail.com